भुवन कोषाङ्क

Bhugol–May, June, July 1932 [*Regd. No. A. 1333*

वर्ष ८] मई, जून, जुलाई [संख्या १-३

भूगोलविषयक हिन्दी का एक-मात्र सचित्र मासिक पत्र



भूगोल अनुभव हेतु यह "भूगोल" पत्र अमोल है।
"भूगोल" कहता है निरख, भू गोल है भू गोल है॥

सम्पादक—रामनारायण मिश्र, बी० ए०

वार्षिक मूल्य ३) इस प्रति का १)

Yearly Subscriptions:
Indian Rs. 3
Foreign Rs. 5

Price of this Number
Re. 1

भुवन-कोष

अ

अखण्ड—दिलदार नगर जो ग़ाज़ीपुर से १८ मील दक्षिण में है।

अगस्त्याश्रम—अगस्तपुरी यह नासिक से २४ मील दक्षिण-पूर्व की ओर है।

अग्रवन—आगरा, व्रज के ८४ वनों में से यह एक था।

अङ्ग—भागलपुर के आस-पास का देश था। जहां गंगा और सरयू का संगम था वहीं इसकी पश्चिमी सीमा थी। यहीं रामायणकालीन लोमपाद और महाभारत कालीन कर्ण का राज्य था। चम्पापुरी इसकी राजधानी थी।

अचिन्ता—अजन्ता। (हैदराबाद राज्य में)

अच्छोदसरोवर—काश्मीर, अच्छावत का वर्णन बाणभट्ट की कादम्बरी में आया है। मार्तण्ड से यह केवल छः मील दूर था। सिद्धाश्रम इसी सरोवर के किनारे स्थित था।

अजितवती या हिरण्यवती—छोटी गंडक जो कूसी नगर या कसिया के उत्तर में है। यही बुद्ध भगवान का स्वर्गवास हुआ था।

अजमती—अजय नदी (बंगाल में।)

अधिराज—दतिया (यह ग्वालियर प्रदेश में स्थित था।) यहीं दन्त-वक्र का राज्य था जिसे श्रीकृष्ण जी ने मारा था। इसी प्रदेश को सहदेव (पाण्डवों के भाई) ने जीता था।

अनन्तपद्मनाभ—त्रिवेन्दुरम्। (ट्रावनकोर राज्य में)

अनुराधपुर—लंका की पुरानी राजधानी।

अनूपदेश—१ गऊ (मालवा) २ व्रज।

अन्तर्वेद—गंगा और यमुना के बीज का द्वाब।

अन्ध्र—१ गोदावरी और कृष्णा के बीच का देश है। धनकटक इसकी राजधानी थी। वेंगी प्राचीन राजधानी थी। २ तेलिंगना यह हैदराबाद के दक्षिण में है।

अन्हलपत्तन—पत्तन गुजरात में है। बनराज ने ८ वीं सदी में इसकी स्थापना की थी।

अपगा—पंजाब में रावी के पश्चिम में अयुक नदी।

अपरनन्दा—सुकी नदी जो गया और पटना जिलों में बह कर गंगा में मिलतीहै।

अपरविदेह—रंगपुर और दीनाजपुर।

अपरान्तक—कोनकन और मलाबार।

अभिसारि—हज़ारा (इस प्रदेश को अर्जुन ने जीता था)

अमरकंटक—मैकाल (मेकल) पहाड़ियों में स्थित है। यहीं से नर्मदा और सोन नदियाँ निकलती हैं।

अमरनाथ—काश्मीर राज्य में भैरवघाटी के हरमुख (हिमालय) पर्वत में एक प्रसिद्ध मन्दिर है। श्रावण मास में बरफ के कम होने पर यह खुलता है। तभी यहाँ एक विचित्र पक्षी प्रगट होता है।

अमरावती—१ नगरहार, यह गाँव लगभग दो मील जलालाबाद के पश्चिम में है। २ अमरावती मध्य भारत में है।

अमरेश्वर—ओंकार नाथ यह नर्मदा के दाहिने किनारे पर स्थित है। बम्बे बड़ौदा और सेन्ट्रल इण्डिया रेलवे की मोरटक्का स्टेशन से कुछ ही मील दूर है।

अमि—छपरा से ११ मील पूर्व की ओर है। यहां सती भवानी का एक मन्दिर है।

अम्बर—जैपुर राज्य, अमेर।

अयोधन—पाकपत्तन (पंजाब में)

अयोध्या—अवध में श्री रामचन्द्र जी का राज्य था। बौद्ध काल में यह दो भागों में बट गया था। उत्तरी भाग उत्तर कोशल कहलाता था इसकी राजधानी श्रावस्ती थी जो राप्ती नदी के किनारे बसी थी। दक्षिणी भाग दक्षिण कोशल कहलाता था। इसकी राजधानी सरयू के किनारे अयोध्या नगरी थी। साकेत, सेतिका, विशाखा।

अरुणकुन्दपुर—वारंगल (तेलिंगना की राजधानी)। अरुणकुन्द पत्तन।

अर्कक्षेत्र—पद्म क्षेत्र।

अर्जिकेय—विपासा या व्यास नदी।

अर्जुनी—धवला या बाहुदा नदी।

अर्द्धगंगा—कावेरी नदी

अर्बुद—आबू पर्वत (यहीं वशिष्ठ ऋषि का आश्रम था।

अवन्ती—मालवा या विक्रमादित्य का राज्य, उज्जैन।

अवन्ती नदी—सिप्रा या क्षिप्रा; उज्जैन इसी नदी के किनारे स्थित है।

अश्वतीर्थ—काली नदी और गंगा का संगम (कन्नौज के पास)।

अष्टावक्राश्रम—राहुआमपुर या रैला जो हरिद्वार से १० मील की दूरी पर बसा है पास ही अष्टावक्र नदी या समंगा बहती है।

असिक्नी—चन्द्रभागा या चनाब नदी।

अहिछत्र } —आदिकोट, रामनगर—यह बरेली से २० मील पश्चिम
अहिक्षेत्र } को है। यहीं उत्तरी पांचाल की राजधानी थी।

आ

आनन्दपुर—बड़ नगर (गुजरात)

आनर्त—गुजरात और मालवा का कुछ भाग।

आयुध—वितस्ता (झेलम) और सिन्धु नदियों के बीच का देश था।

आरामनगर—आरा।

आरत्त—पंजाब।

आर्यावर्त्त—उत्तरी हिमालय और विन्ध्या के वर्णन का प्रदेश।

आलभी—
आलवी— } ऐरवा, एकप्राचीन बौद्ध नगर है वह इटावा से २७ मील उत्तर-पूर्व की ओर है। यहीं से महावीर ने जैनधर्म का प्रचार आरम्भ किया था।

आसिलदुर्ग—जूनागढ़।

इ

इन्द्रप्रस्थ*—पुरानी दिल्ली। युधिष्ठिर महाराज ने इसे यमुना जी के किनारे अपनी राजधानी बनाया था।

इन्द्रशिला—गया के उत्तर पूर्व में गिरियक पहाड़ी।

इरावती—१ रावी, २ इरावदी (पावनी, सुभद्रा)।

इल्वल—अलोरा, दौलताबाद के पास (हैदराबाद राज्य में)। दक्षिण की ओर जाते समय अगस्त्य ऋषि ने इल्वल दैत्य और उसके भाई वातापि को यहीं मारा था।

इसलय—बसाढ़ के उत्तर में तीस मील की दूरी पर बसा हुआ केसरिया गांव।

इक्षुमती—रुहेलखंड की काली नदी।

उ

उग्र—केरल (मलाबार, ट्रावनकोर और कनारा)

उजालिकनगर—जैस नगर जो रायबरेली से २० मील पूर्व की ओर है।

उज्जैनी—उज्जैन, अवन्ती की राजधानी सिप्रा नदी के किनारे स्थित है। महा काल का प्रसिद्ध मन्दिर यहीं है।

उज्जानक—काफिरिस्तान। यह प्रदेश सिन्ध नदी के किनारे काश्मीर के पश्चिम में है।

उज्जवन्त—गिरिनार-पर्वत जो काठियावाड़ में जूनागढ़ के पास है।

उत्कल—उड़ीसा।

---

* इन्द्रप्रस्थं वृकप्रस्थं, माकंदीं वारणावतम्।
देहि मे चतुरो ग्रामान् ग्रामेकं च पंचकेम्॥

उत्पलारण्य या
उत्पलावतकानन } —बिठूर (कानपुर से १४ मील)। यहीं वाल्मीकि जी का आश्रम था। यहीं सीता जी के दो पुत्र लव और कुश उत्पन्न हुए थे। ध्रुव के (पिता राजा उत्तानपाद) यहीं राज्य करते थे।

उत्तरगा
उत्तरानका } —रामगंगा नदी।

उत्तरकुरु—गढ़वाल का उत्तरी भाग और हूण देश।

उदुखंड—ओहिन्द (सिन्ध नदी के किनारे पर) पेशावर ज़िले में स्थित है।

उदयगिरि—भुवनेश्वर (उड़ीसा में) ५ मील की दूरी पर एक पर्व है।

उद्र—उड़ीसा।

उद्यान—पेशावर के उत्तर में स्वात नदी के किनारे स्थित था।

उपमल्लक—मलक्का (मल्ल)

उरंजीरा—विपासा (व्यास नदी)

उरविल्व—बुद्धगया।

उरगा या उरसा—हज़ारा ज़िले में झेलम और सिन्ध के बीच का भाग।

ए

एकचक्र—१ आरा २ चक्र नगर (इटावा से १६ मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित है)

एकलिंग—हारीत—आश्रम (उदयपुर राज्य में)।

एकामरकानन—भुवनेश्वर (उड़ीसा में)।

ऐ

ऐरावती—रावी, राप्ती और इरावदी नदियाँ।

ओ

ओड्र—उड़ीसा।

ओंकारनाथ—अमरेश्वर (नर्मदा के किनारे।)

औ

औदुम्बर
और सौवीर } —कच्छ, इसकी राजधानी कोटेश्वर या कच्छेश्वर थी।

क

कच्छ—गुजरात का खेड़ा नगर जो अहमदाबाद और खम्भे के बीच में स्थित है।

कटद्वीप—कटवा (बर्दवान ज़िले में।)

कनखल—हरद्वार।

कनिष्कपुर—कनिखपुर या कामपुर, श्री नगर से १० मील दक्षिण में स्थित है। इसे काश्मीर के कनिख या कनिष्क राजा ने बसाया था।

कन्यातीर्थ—कुरुक्षेत्र।

कन्वाश्रम—बिजनौर, यहीं कन्व मुनि ने शकुन्तला को पाला पोसा था।

कपिवट—राजमहल पहाड़ियाँ।

कपिल धारा—१ नासिक से २४ मील दक्षिण पश्चिमी में यहाँ कपिल मुनि का आश्रम था। २ अमर कंटक में नर्मदा का प्रथम प्रपात।

कपिलवस्तु—बुद्ध भगवान का जन्मस्थान। यह स्थान नैपाल राज्य का निगलिवा गाँव है जो गोरखपुर ज़िले की उस्का स्टेशन से ३८ मील उत्तर-पश्चिम की ओर है।

कपिसा—१ कुशान (हिन्दू कुश में), २ स्वर्ण रेखा (उड़ीसा में)

कपिठ (साँकास्य)—संकसिया बसन्तपुर नगर इक्षुमती (काली नदी) के किनारे फ़र्रुख़ाबाद जिले में शहर से २० मील पश्चिम की ओर कन्नौज और अतरंजी के बीच में स्थित है यहाँ राजा जनक के भाई कुशध्वज की राजधानी थी।

कपिवती—भैगू या बहगुल (रामगंगा की सहायक) नदी।

कबन्ध—सारीकुल और तश्कुरग़न।

कमलांक—कोमिल्ला। यहां टिपरा की राजधानी थी।

कम्पिल्य—कम्पिल। फ़रुख़ाबाद से २५ मील (उत्तर-पश्चिम) की ओर बूढ़ी गंगा के किनारे दक्षिण पांचाल की राजधानी थी। राजा द्रुपज ने अपनी पुत्री द्रौपदी का स्वयम्बर यहीं रचा था।

कम्बोज—अफ़ग़ानिस्तान (पर यह नाम अश्वकान का अपभ्रंश है।)

करकल्ल—कराची (सिन्ध प्रान्त में)

करतोया—सदानीरा, यह नदी कामरूप और बंगाल की सीमा-बनाती है और रंगपुर और दीनाजपुर में हो कर बहती है।

करवीपुर—यह नगर कृष्णा की शाखा वेणा के किनारे पश्चिमी घाट में जोनेर के पास स्थित है। यहाँ श्रीकृष्ण जी परशुराम से मिले थे। यहीं श्रृगाल राजा मारा गया था। (हरिवंश)

करुष—विहार के शाहाबाद ज़िले का पूर्वी भाग।

कर्णाट—रामनद और सिरिंगापट्टम के बीच में कर्णाटक का एक भाग।

कर्दमाश्रम—सितपुर (सिद्धपुर) गुजरात में। यहाँ कर्दम ऋषि का आश्रम था। यहीं कपिल मुनि का जन्म हुआ था।

कर्णसुवर्ण—कनसोना (मुर्शिदाबाद जिले में) आदिसुर की राजधानी थी। बहरामपुर से ४ मील दक्षिण भागीरथी के किनारे बसा था। यहीं विधिपूर्वक यज्ञ करने के लिये कन्नौज के राजा वीरसिंह ने ५ ब्राह्मण भेजे थे।

कर्णवती—बुंदेल खण्ड की केन नदी।

कर्मनासा—यह नदी शाहबाद के पश्चिम में संयुक्त प्रान्त और बिहार की सीमा बनाती है।

कर्कोटक नगर—कड़ा, इलाहाबाद के ४१ मील। उत्तर-पश्चिम की ओर है।

कलिन्ददेश—यमुना के निकास के पास का देश।

कलिंग—उड़ीसा के दक्षिण और द्राविड़ के उत्तर का देश।

कल्याण—कल्याणी (बम्बई प्रान्त)। यहां चौलक्य लोगों की राजधानी थी।

कसावती—बंगाला की कसाई नदी।

कलिवत—सुशुनी (राजमहल की पहाड़ियां।)

कत्रिपुर—त्रिपुर या टिपरा।

कहरोर या कोरोर—मुलतान और लूनी के बीच में स्थित है। यहीं श्री बिक्रमादित्य ने साका लोगों को हराया था।

कश्यपपुर—काश्मीर। श्री नगर से ३ मील उत्तर में हरिपर्वत परकश्यप मुनि का आश्रम था।

कांचीपुर या कांची—कांजीवरम (द्राविड़ या चोला राज्य की राजधानी थी) इस शहर का दक्षिणी भाग विष्णु कांची और उत्तरी भाग शिव कांची कहलाता है। शिव कांची में ही स्वामी शंकराचार्य की समाधि है।

कान्तिपुर—१ कोटवल ग्वालियर। २ कोटवा (इलाहाबाद)

कान्य कुब्ज—कन्नौज।

कामकोष्ठी—कुम्भकोनम—

कामाश्रम—कारोन यह स्थान बलिया ज़िले में कोरोंडी से ८ मील उत्तर की ओर है। पहले सरयू नदी यहीं पर गंगा में मिलती थी। यहीं महादेव जी ने कामदेव को नष्ट किया था। यहीं कामेश्वर नाथ का मन्दिर है।

कामलिङ्ग—कोमिल्ला।

कामरूप—यह देश करतोया नदी के पूर्व में था। मनीपुर, जयन्तिया, कछार, पश्चिमी आसाम; मैं मनसिंह (का कुछ भाग) और सिलहट इसी में शामिल थे। प्राग्योतिष (कामाख्या) राजधानी थी।

काम्यकवन—हस्तिनापुर के पूर्व में गंगा के उस पार; यहां से पांडवों ने तीर्थ यात्रा आरम्भ की थी।

कारापथ—कारा बाग़ (सिन्ध केकिनारे)। श्री रामचन्द्र जी ने लछमण के पुत्र चन्द्रकेतु को यहीं का राजा बनाया था।

कार्त्तिकी—चोया नदी (सरस्वती की सहायक)

कालादि—केरल।

कालीघाट—कलकत्ता के पास।

कालिन्दी—यमुना।

काशी—बनारस।

काष्टमंडप—काठमांडू (नैपाल की राजधानी)

किमृत्य—कैमूर श्रेणी (सोन और टोंस नदी के बीच विन्ध्याचल का भाग)

किरणसुवर्ण—सिंहभूमि (मगधराज्य का दक्षिणी भाग था।)

किरातदेश—टिपारा (सुन्ध देश) त्रिपुर कत्रिपुर।

किष्किन्धा—बीजा नगर से १ मील पूर्व में है। श्री राम ने सुग्रीव के भाई बालि को यही मारा था? यह एक छोटा गांव है और अनागंडी के पास तुंगभद्रा के दाहिने किनारे पर स्थित है। यह नगर बिलारी (बहहरि) से ६० मील उत्तर की ओर है। किष्किन्धा से २ मील दक्षिण पश्चिम की ओर पम्पा सरोवर है।

कीकट—मगध।

कुक्कुटपाद गिरि—कुरकिहार (गया ज़िले में)

कुटिक—कोसिला (रामगंगा की सहायक)।

कुटिकोष्टिक—कोह, रामगंगा की एक छोटी सहायक नदी।

कुन्तलदेश—बिलारी जिले का एक भाग (कुरुगोडे)।

कुन्तभोज—मालवा प्रान्त का एक प्राचीन नगर जो चम्बल की एक सहायक अश्व नदी या अश्वर्थ नदी के किनारे स्थित था।

कुण्डिनपुर—(विदर्भपुर कुन्दपुर कोन्दावीर) विदर्भ देश की राजधानी थी।

कुब्जगृह*—कजिरी (भागलपुर)

कुभ—काबुल नदी (काबुल नगर)

कुमार स्वामी—मद्रास प्रान्त में त्रिपाटी से १२२ मील दक्षिण पूर्व में।

कुमारी—कन्या कुमारी,

कुरु जाँगल—श्रीकंठ देश। हस्तिनापुर के उत्तर-पश्चिम में सरहिन्द में स्थित है। विलसपुर इसकी राजधानी थी।

---

* ततः पांचनदश्चैव कृत्स्नंच कुरुजांगलम्।
तथा रोहित कारण्यं मरुभूमिश्च केवला॥
अहिच्छत्रं कालकूटं गंगाकूलं चभारत।
वारणं वाट धानं च यामुनश्चैव पर्वतः॥

कुरुक्षेत्र—थानेश्वर, पहले इस प्रान्त में सोनीपत, आमिन और पानीपत शामिल थे। कौरवों और पांडवों का युद्ध न केवल थानेश्वर में वरन समीप के प्रदेश में भी हुआ था। द्वैपायन नाम का तीर्थ थानेश्वर में स्थित है। आमिन में ही अभिमन्यु मारे गये थे। यहीं अर्जुन ने अश्वत्थामा को मारा था। आमिन शब्द शायद अभिमन्यु से बिगड़ कर बना है।

कुलिन्द देश—सहारनपुर।

कुलूट—कुल्लू (व्यास नदी के ऊपरी भाग में) देश, नगरकोट इसकी राजधानी थी।

कुश भवनपुर
कुशपुर } —सुल्तानपुर (गोमती के किनारे)

कुशागापुर—राजागिरि (गिरिवृजपुर) मगध की पुरानी राजधानी थी।

कुशस्थल—कन्नौज।

कुशस्थली—द्वारका (गुजरात)

कुशावती—द्वारका, इसे इक्ष्वाकु के भतीजे आनर्त ने बसाया था। १ कसूर (लाहौर से ३२ मील दक्षिण-पूर्व की ओर)

कुशीनगर—कसिया, गोरख पुर से ३५ मील पूर्व की ओर।

कुसुमपुर—१ पाटलिपुत्र, २ कान्यकुब्ज।

कुस्त्राणहृदय—रावणहृद झील।

केकय—व्यास और सतलज के बीच का देश।

केदार—केदारनाथ का मन्दिर एक पहाड़ी पर बना है। काली गंगा यहीं से निकलती है और रुद्र प्रयाग के पास अलखनन्दा में मिलती है। केदारनाथ से बद्री नाथ जाने में आठ दिन लगते हैं।

केरल—मलाबार, ट्रावकोर और कनारा।

केशवती—नैपाल की विश्नुमाली नदी।

कैलाश—किनलुन पर्वत।

कोटतीर्थ—१ कलिंजर किले का एक तालाब २ मथुरा में ३ गोकर्ण में एक तालाब।

कोलाहाल पर्वत—चन्देरी के पास की पर्वतश्रेणियाँ जो बुन्देलखण्ड को मालवा से

कोलूक—कुलूट।

कोसल—अयोध्या।

कृष्णबेणी—कृष्णानदी।

कृतमालवैगाई नदी जिसके किनारे मथुरा शहर स्थित है। यह नदी मलय पर्वत से निकलती है। (चैतन्य चरितामृत, विष्णु-पुराण, मार्कंडेय पुराण)।

कृथकैसिक—पयस्विनी। पूर्णा (बरार)

कृपान—केन नदी (बुन्देलखंड)

ख

खांडवप्रस्थ—इन्द्रप्रस्थ (पुरानी दिल्ली)

खांडववन—मुज़फ़्फ़रनगर, अर्जुन ने अग्नि की क्षुधा यहीं शान्त की थी।

खेटक—खेड़ा (गुजरात)

ग

गर्जपुर—ग़ाज़ीपुर।

गंडकी—यह नदी सप्त गंडकी या धवलगिरि श्रेणी से निकलत है और त्रिवेणी घाट के पास मैदान में प्रवेश करती है। सालग्राम के पास इसका निकास है जहाँ भरत और पुलह का आश्रम था। सालग्राम के दक्षिण में मुक्तिनाथ का मन्दिर है। इसी से इस नदी को सालग्रामी और नारायणी भी कहते हैं। (ब्रह्मवैवर्त पुराण)।

गाधिपुर—कन्नौज (विश्वामित्र के पिता गाधि राजा की राजधानी यहीं थी।

गन्धहस्ति स्तूप—फल्गू के किनारे बकरौरनगर जो बुद्धगया के सामने बना हुआ है।

गन्धमादन—रुद्राहिमालय का एक भाग जो बदरिकाश्रम से कुछ दूर उत्तर-पूर्व की ओर आरम्भ होता है।

गन्धर्व देश—गान्धार।

गम्बीरा—चम्बल की सहायक (कहते हैं कि यह रन्तिदेव के रक्त से निकली है)

गयाशीर्ष—गया (ब्रह्मयोनि)। यहीं बुद्ध भगवान ने अपना प्रभाव शाली व्याख्यान दिया था।

गयानाभि—जजपुर (उड़ीसा में)

गर्ग आश्रम—रायबरेली ज़िले में गंगा को दूसरी ओर आसनी के सामने का स्थान।

गहलत—गिलगिट।

गान्धार—गान्धार देश काबुल नदी की घाटी में कुंआर और सिन्ध नदियों के बीच में स्थित है। पुरुषपुर (पेशावर) इसकी राजधानी थी।

गालव आश्रम—जयपुर से ३ मील दक्षिण में।

गिरिनगर—गिरिनार (काठियावाड़ के जूनागढ़ राज्य में)। यहां दत्तात्रेय ऋषि का आश्रम था।

गिरिराजपुर—राजगिरि (बिहार)। यह मगध की राजधानी थी। यहीं जरासन्ध का महल बना था। यह वैहार, ऋषिगिरि बराह, वृषभ, और चैत्यक नाम की पांच पहाड़ियों से घिरा था। आजकल वे बैभारगिरि, रत्नगिरि; निपुलागिरि उदयगिरि और सोनगिरि कहलाती हैं। जरासन्ध के क़िले में रंगभूमि स्थान पर भीम ने जरासन्ध को मारा था। बुद्ध भगवान पांडवगिरि में रहते थे।

गिरियक—पंचान नदी के किनारे पटना ज़िले में एक पुराना बौद्ध नगर है।

गुर्जर—गुजरात (सौराष्ट्र) सुराष्ट्र। आनर्त २ मारावाड़, लात, लार, लाल।

गुणमती विहार - गया ज़िले में धरावत के पास स्थित है।

गेहमुर—गहमर स्टेशन ग़ाज़ीपुर ज़िले में है यहीं मुर दैत्य का निवास था।

गोकर्ण—गोदिया (जोआ से ३० मील उत्तरी कनारा में स्थित है। यहां महाबलेश्वर का मन्दिर है।

गोकर्ण—उत्तरी कनारा का एक नगर गोआ से ३० मील दक्षिण में स्थित है।

गोकुल—मथुरा के पास गोवाराष्ट्र (गोवर्द्धनपुर) परशु का स्थान।

गोणार्द—पंजाब।

गौतमाश्रम—अहिआरी गांव का अहिल्यास्थान तिरहुत के जनकपुर से दक्षिण-पश्चिम को ओर २५ मील पर बसा है। यहीं गौतम —मुनि का आश्रम था छपरा के पास खेलगंज में।

गौतमी—गोदावरी नदी।

गोपकवन—गोआ। गोवाराष्ट्र (गोवर्द्धन पुर), परशुराम का स्थान।

गोप्रतार—गुप्तारा। फैज़ाबाद में सरयू के किनारे एक स्थान है। कहा जाता है कि श्री रामचन्द्र जी ने यहीं से स्वर्गारोहण किया था।

गोमन्तगिरि—पश्चिमी घाट के उत्तरी भाग में एक अलग सी पहाड़ी है। यहां कृष्ण और बलराम ने जरासन्ध को हराया था।

गोमती—गोमती, गोदावरी, गौतमी, दक्षिण गंगा।

गोमुखी—गंगोत्री से १५ मील उत्तर में एक तीर्थ है।

गौर—लक्ष्मणवती) बंगाल की राजधानी)।

गौरा—गोंडा (उत्तर कौशल)

गौरी—काबुल नदी की एक सहायक नदी।

गंगा—भागीरथी, जान्हवी।

गंगाद्वार—हरिद्वार (मायापुर)।

गंगोत्री—रुद्र हिमालय का वह स्थान जहाँ से गंगा जी निकलती हैं। यहाँ १२ वर्ष तपस्या करने के बाद पांडव लोग स्वर्ग रोहिणी चोटी पर चढ़े थे।

गौरीकुण्ड—गंगोत्री के पास एकती सी है यहाँ केदार गंगा भागीरथी में मिलती है।

गृध्रकूट— शैलगिरि (राजगिरि के पास स्थित है।

च

चक्रतीर्थ—१ कुरुक्षेत्र के पास। यहाँ महमूद गज़नी के समय में अधिक लोग रहते थे। २ प्रभास (गुजरात) में। ३ गोदावरी के निकास के पास त्र्यम्बक गांव से ६ मील।

चम्पापुरी—चम्पानगर यह भागलपुर के पास था और अंगदेश की राजधानी थी।

चन्दनगिरि—मलयगिरि—मलाबार घाट में।

चण्डपुर—शाहाबाद ज़िले में भमुआ से ४ मील पश्चिम को ओर है। यहीं सुम्भ और निसुम्भ के बीच में युद्ध हुआ था। यहीं चण्ड और मुण्ड का निवास था।

चतुष्पीठ पर्वत--उड़ीसा का असिया पहाड़।

चिताभूमि--बैद्यनाथ, यहां जयदुर्गा और भैरव का मन्दिर है।

चेत्यगिरि—बेस नगर, सांची के पास।

चपल— चिटगांव।

चन्देलगर—चरणाद्रि (चुनार) यहीं चन्देल क्षत्रियों ने अपना राज्य स्थापित किया था।

चन्द्रभागा—चनाब (चन्द्रिका)।

चन्द्रगिरि—बेलिगोला और सेरिंगा पट्टन के पास जैनियों का तीर्थ है।

चन्द्रिकापुरी—स्रावस्ती या सहेत-महेत। यहीं जैनियों के आठवें तीर्थंकर चन्द्र प्रभानाथ जी का जन्म हुआ था।

चन्दवर—(चन्द्रपुर) फीरोज़ाबाद। यहीं जयचन्द और शहाबुद्दीन का युद्ध हुआ था।

चन्द्रावती—(सुलक्षिणी) गोगा नदी जो गंगा जी में गिरती है।

चन्द्रावती—चन्द्रभागा नदी के किनारे मालवा का झालरापाटन नगर।

चर्मणावती—चम्बल।

च्यवनाश्रम--१ शाहबाद ज़िले का चौसास्थान। यही च्यवनऋषि का आश्रम था। २ एक आश्रम सतपुड़ा पर्वत पर था। ३ धोसी यह स्थान नरनौल से ६ मील दक्षिण में था यहीं ऋषि जी ने अनूपदेश की राजकुमारी से विवाह किया था।

(वायु पुराण)

चरणाद्रि—चुनार। यहीं क़िले के एक भाग में भर्तृहरि का आश्रम था।

चरित्रपुर—जगन्नाथपुरी।

चित्रदुर्ग—चितल दुर्ग।

चित्रकूट—बांदा ज़िले में कामतानाथ गिरि, पयस्वनी या मन्दाकिनी के किनारे स्थित है। यहीं श्री रामचन्द्र जी ने कुछ समय बताया था।

चित्रपला }
चित्रोत्पला } —उड़ीसा की महानदी।

चेदि—चन्देरी (मालवा में) यहीं शिशुपाल की राजधानी थी। इस प्रदेश में बुंधेल खंड रीवांराज्य और जबलपुर का राज्य शामिल था। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि कलिंजर ही इस राज्य की राजधानी थी।

चेरा—इसमें ट्रावन कोर, कुछ मलावार और कोयम्बटूर शामिल था।

चोला—कृष्णा और कावेरी के बीच में कारोमंडल तट। कांची यहाँ की राजधानी थी। इस प्रदेश का दूसरा नाम द्राविड़ है।

ज

जजाति या यजातिपुर—जजपुर या यज्ञपुर।

जनस्थान—औरङ्गाबाद।

जन्हु आश्रम—भागलपुर के पश्चिम में सुल्तानगंज में जन्हुमुनि का आश्रम है। कहते हैं कि जन्हुमुनि ने गंगा जी के कोलाहल से रुष्ट हो कर गंगा जी को लुप्त कर दिया। भगीरथ के प्रार्थना करने पर उन्होंने गंगा जी को फिर प्रगट कर दिया था। पर इसी से गंगा का दूसरा नाम जान्हवी पड़ा। गंगा नदी की तली से जो पहाड़ी उठी हुई है उसी पर उनका आश्रम था।

जम्बूद्वीप—भारतवर्ष।

ज्वालामुखी—कांगड़ा के पास एक तीर्थ है। यहाँ अम्बिका या मातेश्वरी का मन्दिर बना हुआ है। यहीं से ज्वाला निकला करती है।

जावलिपत्तन—जबलपुर।

जीर्ण नगर--जोनेर (पूना ज़िले में।

जुष्कपुर—काश्मीर का ज़ुकुर (शेको)

जेतावन विहार—जोगिनी भैरिया टीला जो श्रावस्ती से १ मील दक्षिण की ओर है। यहाँ बुद्ध भगवान ने कुछ समय तक निवास किया था।

झ

झारखंड—छोटा नागपुर।

त

तक्कदेश—विपासा और सिन्धु नदी के बीच में स्थित है बाल्हिक लोगों का देश यहीं था। (राजतरंगिणी)

ततिनी—उत्तरी मद्रास (सरकार्स) की चिकाकोल नदी ।

तपनी—ताप्ती नदी ।

तनुस्रो—टनासरम, लोअर ब्रह्मा का दक्षिणी भाग ।

तमसा—टोन्स नदी की स्थिति सरजू और गोमती नदियों के बीच में है । यह नदी आज़मगढ़ ज़िले में बह कर गंगा में गिरती है ।

तमोर—अरून और सून का संगम पुरनिया ज़िले में नाथपुर के पास है ।

तलकट—तलिकोटा ।

तक्षशिला—टक्सिला (शाह ढेरी के पास) । भरत के पुत्र और श्री रामचन्द्र जी के भतीजे राजा तक्ष ने इसे बसाया था । कथा सरित्सागर के अनुसार इसकी स्थिति वितस्ता (झेलम) नदी के किनारे थी ।

तापी—ताप्ती नदी ।

तामसवन—सुल्तानपुर (पंजाब)

ताम्रपर्णी—लंका २ टिनेवली ज़िले की ताम्रपर्णी नदी ।

ताम्रलिप्त—ताम्रलिप्ति । सेलाई नदी के पास तामलुक । इसकी स्थिति पहले समुद्रतट पर थी फिर नई धरती के निकल आने से उस स्थान पर हो गई जहां पर सेलाई नदी हुगली में मिलती है ।

तीर्थपुरी—सतलज के किनारे हिमालय प्रदेश का एक गांव जो दार्चिन से २१ मील है । कहा जाता है कि भस्मासुर यहीं मारा गया था । भस्मासुर को शिव जी से वरदान मिला था कि जिसके सिर पर वह अपना हाथ रख दे वही भस्म हो जावे । उसने वरदान देने वाले शिव जी पर ही अपना हाथ फेरना चाहा । उन्होंने भाग कर विष्णु जी की शरण ली । अन्त में भस्मासुर ने अपने ही सिर पर हाथ रक्खा और भस्म हो गया ।

तिर्भुक्ति—तिरहुत ।

तेलिंगना—(त्रिकलिंग) गोदावरी और कृष्णा के बीच का देश ।

तिलाप्रस्थ—तिलपत, तुग़लकाबाद से ६ मील दक्षिण-पूर्व की ओर और कुतुब-मीनार से १० मील । यह युधिष्ठिर की राजधानी इन्द्रप्रस्थ में ही शामिल था । यह उन पांच गांवों में से एक था जिनको युधिष्ठिर ने दुर्योधन से मांगा था ।

तिलोदक—तिलारा फल्गू नदी के किनारे का एक गांव जो पटना से ३३ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर है ।

तुंगभद्रा—कृष्णा की एक सहायक नदी । इसी तुङ्गभद्रा के किनारे किष्किंधा स्थित है ।

तुलुग
तुलव } —दक्षिणी किनारा ।

तैलंग—तेलिंगना ।

द

दन्तपुर—१ राजमहेन्द्री २ जजपुर उड़ीसा में ३ पुरी। कहा जाता है कि बुद्ध भगवान का दंत यहीं से लङ्का पहुँचा था।

दर्भवती– १ दमोई (गुजरात) २ डिभाई (बुलन्दशहर)

दरद—दार्दिस्तान।

दर्दर—पूर्वी घाट का दक्षिणी भाग।

दसपुर—मांडसोर (मालवा)

दसार्ण—छत्तीस गढ़ी मैदान का एक भाग।

दक्षिण गंगा—कावेरी नदी।

दक्षिण मथुरा—मदुरा (मीनाक्षी) यह पांड्य या पांडु राज्य की राजधानी थी।

दक्षिणा-पथ }
दक्षिणात्य } —भवभूति के समय में दक्खिन को दक्षिणापथ और रामायणकाल में दंडकारण्य कहते थे।

दक्षिण कोशल—विदर्भ, बरार (गोंडवाना)।

दक्षिण-प्रयाग—त्रिवेणी (रघनन्दन) हुगली के उत्तर में।

दक्षिणात्य—विन्ध्या के दक्षिण का भाग।

दामलिप्त—ताम्रलिप्त, सुह्म की राजधानी।

दामोदर—धर्मोदय बंगाल की दामुदा नदी।

दुर्जयलिंग—दार्जिलिंग।

दुर्वासा आश्रम—भागलपुर ज़िले में कोलगाँव नाम के पास २ नवादा (गया) के पास।

दूधगंगा—अलखनन्दा की शाखा।

देवल—टट्टा (सिन्ध में)

देवबन्दर—ड्यू (गुजरात में)।

देवगिरि—धारागर (दौलताबाद) हैदराबाद राज्य में। अरावली का एक भाग।

देवीकोट—सोनितपुर।

देवीपाटन—गोंडा से ४६ मील उत्तर पूर्व में।

द्वारसमुद्र—मैसूर का हुल्लाविद स्थान।

द्राविड़—मद्रास से सिरिंगापट्टम और कुमारी तक का प्रदेश। कांचीपुर इसकी राजधानी थी।

दृशद्वती—घग्घर नदी जो अम्बाला और सरहिन्द ज़िलों में होकर बहती थी। अब वह राजपूताना की बालू में नष्ट हो जाती है।

द्वारकेशी—द्वारिकेश्वरी।

द्वारावती—द्वारका (गुजरात), या द्वारिका (श्याम)

द्वारिकेश्वरी—बंगाल में विष्णुपुर के पास दराती केश्वरी नदी। रूपनारायण की एक शाखा।

ध

धनकटक—धरणीकोट अमरावती से १ मील पश्चिम में २ बैज़वादा। यह राजा सतवाहन या शालिवाहन की राजधानी थी।

धनपुर—जोहर गंज, गाज़ीपुर से २४ मील।

धर्मारण्य—बुद्ध गया से ४ मील। २ इसमें गाज़ीपुर, जौनपुर और बलिया शामिल थे।

धर्मपुर—नासिक के उत्तर में।

धारानगर—धार (राजाभोज की राजधानी)

न

नगरहार—सुरखार या सुरखरूद और क़ाबुल नदियों के संगम पर जलालाबाद नगर के पास ही यह नगर स्थित था।

नगरकोट—कांगड़ा। यहीं बज्रेश्वरी का मन्दिर है। यह नगर कुलूटकी राजधानी था।

नन्दा—पंचान या पंचानन नदी जो गया और पटना ज़िलों में होकर बहती है। यह नदी रत्नगिरि, हेमकूट या ऋषभगिरि के पास होकर जाती है। यहीं ऋषभ ऋषि ने तपस्या की थी। सोने भंडार गुफा के पास बैभारगिरि में उनकी मूर्ति खुदी हुई है।

नन्दिग्राम- नन्दगांव (अवध)। रामचन्द्र जी के वनवास काल में भरत जी यहीं तपस्वी भेष में रहते थे।

न्यस—हश्तनगर के नीचे क़ाबुल नदी के किनारे का न्यसत स्थान।

नर्मदा—नर्बदा नदी जो अमरकंटक से निकलती है। मुरला पूर्व गङ्गा, रेवा।

नवदेवकुल—नवल, उन्नाव से उत्तर-पश्चिम में ३३ मील बांगरमऊ के पास। यहां ह्वानसांग (चीनी यात्री) आये थे।

नवद्वीप—यह स्थान वर्त्तमान नवद्वीप के सामने गंगा की दूसरी ओर स्थित था। बंगाल के प्रसिद्ध सुधारक श्री चैतन्य जी यहीं पैदा हुए थे।

नागपत्तन—(उरगपुर) नीगोपट्टम्।

नागह्रद—सारीकुल झील (पामीर प्रदेश में)

नालन्द—बड़ा गांव जो राजगिरि से ७ मील उत्तर की ओर स्थित है। यहां प्रसिद्ध बौद्ध विश्वविद्यालय और महायान का केन्द्र था। बुद्ध भगवान के प्रिय शिष्य नागार्जुन यहीं रहते थे।

निगम्बोधतीर्थ—निगम्बोध घाट (पुरानी दिल्ली के पास)

नैमिषारण्य—नीमरवारवन या नीमसार संडीला स्टेशन से २४ मील और सीतापुर से २० मील है। यह स्थान गोमती के बांयें किनारे पर स्थित है। यहां ६० हज़ार ऋषि रहते थे। अधिक तर पुराण यहीं लिखें गये।

नैरंजन—फल्गू नदी। जब नीलरंजन और मोहावा शाखायें मिल जाती हैं तब उनका नाम फल्गू हो जाता है। बुद्ध गया नीलरंजन से कुछ दूर पश्चिम की ओर स्थित है। यह नदी हज़ारी बाग़ ज़िले में सिमरिया के पास से निकलती है।

निर्विन्ध्यया—पैन गंगा मुरला, पूर्व गंगा, रेवा।

निषध—नरवर जो नलपुर से बिगड़ कर बना है। यहीं राजानल की राजधानी थी। यह स्थान ग्वालियर से ४० मील दक्षिण पश्चिम की ओर यमुना की सहायक सिन्ध नदी के किनारे पर स्थित है। २ उपनिषेध या हिन्दू कुश पर्वत।

नीलाचन—नीलाजन या लीलाजन, फल्गू नदी का ऊपरी भाग।

प

पटल—तट्टा (सिन्ध) २ हैदराबाद।

पद्मक्षेत्र—कनारक, पुरी (उड़ीसा) से १९ मील उत्तर-पश्चिम की ओर यहाँ श्री कृष्ण के पुत्र साम्ब ने एक सूर्य-मन्दिर बनवाया था।

पद्मपुर या पद्मावती—भवभूति कवि का जन्मस्थान, यह स्थान विजयनगर से मिलता-जुलता है। यह स्थान सिन्धु और पार्वती नदियों के संगम पर स्थित है। इसे विद्यानगर भी कहते हैं। ८ वीं शताब्दी में यह नगर न्यायशास्त्र की शिक्षा के लिये प्रसिद्ध था। (महावीर चरित और मालती माधव) २ पामपुर (श्रीनगर के पास) यह स्थान कुंकुम के लिये प्रसिद्ध था।

पम्पा—तुंगभद्रा की एक सहायक नदी। यह नदी ऋष्यमूक पर्वत से निकती है जो अंगान्दी पहाड़ियों से आठ मील है यहीं श्री रामचन्द्र जी की सुग्रीव और हनूमान जी से प्रथम बार भेंट हुई थी। इसके पास ही पम्पसरोवर नाम की झील है।

पयोष्णी—पूर्णा (ताप्ती की एक सहायक)

परसुरामक्षेत्र—कोनकन(शूर्पारक तीर्थ)

परसुरामपुर—परतापगढ़ ज़िले में पट्टी से १२ मील दक्षिण-पूर्व की ओर है।

पर्णासा—राजपूताना की बानास नदी (चम्बल की सहायक)

परुष्णी—इरावती (रावी)

पर्वत—रावी और सतलज के बीच का प्रदेश।

पशुपतिनाथ—नैपाल का प्रसिद्ध मन्दिर।

पश्चिमोदधि—अरब-सागर।

पाटलावती—काली सिन्ध यह एक चम्बल नदी की सहायक है।

पाटलीपुत्र—पटना, इस नगर को बुद्ध भगवान के समकालीन राजा अजातशत्रु ने बसाया था। पर प्राचीन पटना गंगा और सोन की बाढ़ में डूब गया। प्रसिद्ध ज्योतिषी आर्यभट्ट यहीं पैदा हुए। कात्यायन और चाणक्य ने भी यहीं निवास किया था।

पारस्य—फारस। सुरस्थान इसकी राजधानी थी।

पारा—पार्वती नदी जो विजयनगर के पास सिन्ध में गिरती है।

पारिपात्र } विन्ध्या श्रेणी का पश्चिमी भाग जो नर्मदा के निकास से खम्भात की
पारयात्र } खाड़ी तक फैला हुआ है।

पाणिप्रस्थ—पानीपत। यह उन पांच गाँवों में से एक है जिनको पांडवों ने कौरवों से महाभारत के पहले मांगा था।

पार्वतीक्षेत्र—विर्जा।

पावनी—बरमा की इरावदी नदी।

पाँचाल—रुहेलखंड। यह उत्तर और दक्षिण पांचाल नाम के दो हिस्सों में बटा था। उत्तर पांचाल की राजधानी अहिक्षेत्र और दक्षिण पांचाल की राजधानी कम्पिल थी। दक्षिण पांचाल में द्रोपदी के पिता राजा द्रुपद का राज्य था।

पांडु—पांडया (टिनेवली और मदुरी ज़िले), उग्रपुर राजधानी थी।

पांडुपुर—पांढरपुर, भीमा के किनारे शोलापुर ज़िले में स्थित है।

पिनाकिनी—मद्रास प्रान्त की पन्नार नदी।

पेरिमुद—सालसेट द्वीप के पास।

पुन:पुन—पुनपुन नदी (गंगा की सहायक) पटना के पास।

पुलह-आश्रम—सालग्राम।

पुलिन्ददेश—बुन्देलखंड और सागर ज़िले के पास।

पुण्ड्रवर्द्धन—पाँडुआ (फीरोज़ाबाद) माल्दा से ६ मील उत्तर की ओर था। इसमें राजशाही, दीनाजपुर, रंगपुर, नदिया, बीरभूम, मिदनापुर, जंगल महल, पचेत और चुनार शामिल थे।

पुण्याधिष्ठान—पांड्रीतन (काश्मीर की पुरानी राजधानी)

पुरुषपुर—पेशावर (गाँधार की राजधानी)

पुरुषोत्तमक्षेत्र—पुरी (उड़ीसा) दन्तपुर, चरित्रपुर।

पुष्कलावती } —पुष्करावती गान्धार की पुरानी राजधानी।
पुष्करावती }

पुष्कर—पुष्कर झील (अजमेर से ६ मील)

पूर्ति—पयोष्णिनी नदी (ट्रावनकोर)

पूर्वगंगा--नर्मदानदी ।

पूर्णा--१ पयस्वनी, २ कृथ कैशिक नदी (बरार)

पूर्णदभ--कालिंजर ।

पंचाप्सरातीर्थ--छोटानागपुर में कपु, बन्धनपुर, बनजियम्बा, और थेनरी के स्थान पर पंचाप्सरा झील स्थित थी ।

पंचप्रयाग--१ देवप्रयाग, भागीरथी और अलखनन्दा के संगम पर । २ कर्णप्रयाग अलखनन्दा और पिंडार के संगम पर । ३ रुद्रप्रयाग अलखनन्दा और काली-गंगा मन्दाकिनी के संगम पर । ४ नन्दप्रयाग अलखनन्दा और नन्दाकिनी के संगम पर । ५ विष्णुप्रयाग अलखनन्दा और दूधगंगा (धौली) के संगम पर स्थित हैं ।

पंचतीर्थ--१ हरद्वार के पश्चिम में दो पहाड़ियों के बीच के पांच कुण्ड:--अमृतकुण्ड, तप्तकुण्ड, रामकुण्ड, सीताकुण्ड, और सूर्यकुण्ड । २ मद्रास प्रान्त में एक तीर्थ जहां अर्जुन गये थे ।

पंचवटी--नासिक गोदावरी के किनारे स्थित है । यहां श्रीरामचन्द्र जी लक्ष्मण और सीता के साथ बनवास किया था । यहीं से रावण ने सीता को हरा था ।

पंचद्राविड़--द्राविड़, कर्नाट, गुजरात, महाराष्ट्र और तैलंग ।

पंचगंगा--भागीरथी, गोमती, (गोदावरी) कृष्ण (कृष्णवेणी) कावेरी, और पिनाकिनी (पन्नार)

पंचकेदार--केदारनाथ, तुंगनाथ, रुद्रनाथ, मध्यमेश्वर और कल्पेश्वर । ये सब के सब हिमालय में स्थित हैं ।

पंचनद--पंजाब, पांच नदियों का देश जो शतद्रु विपासा, इरावती, चन्द्रभागा और वितस्ता कहलाती हैं ।

प्रजापति वेदी--अलोपी का मन्दिर प्रयागराज में । यहीं ब्रह्मा जी ने यज्ञ किया था । इस मन्दिर में मूर्ति नहीं है । केवल वेदी है ।

प्रभास--सोमनाथ (गुजरात) । इसके पास ही रौताशी नाम की नदी समुद्र में गिरती है । यहीं से श्रीकृष्ण जी ने स्वर्गारोहण किया था ।

प्रद्युम्ननगर--हुगली ज़िले का पांडुआ नगर ।

प्रलम्ब--मडावर या मंडौर, बिजनौर से आठ मील उत्तर की ओर ।

प्रह्लादपुरी--मुल्तान (मूलस्थानपुर)

प्रणहिता--(प्रणिता, महाशाला) वार्द्धा और वैन गंगा की संयुक्त धारा ।

प्रस्रवण गिरि--औरंगाबाद की पहाड़ियां । इन्हीं पहाड़ियों में से एक में जटायु रहते थे ।

प्रतिष्ठान--(१) बिठूर । यहाँ राजा उत्तानपाद के किले के भग्नावशेष अब तक मिलते हैं । उनका प्रसिद्ध पुत्र ध्रुव यहीं पैदा हुआ था । उन्हों ने मथुरा के बन

में तपस्या की थी। (२) दक्षिण का पत्तन नगर जो औरंगाबाद से ३८ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर है। (३) पैठान, आन्ध्र का एक व्यापारिक नगर।

प्रतिष्ठान पुर—झूसी राजापुरवंस की राजधानी थी।

प्रयाग—इलाहाबाद।

प्राग्ज्योतिषपुर—कामरूप या कामाख्या (गौहाटी)

प्रागविजय—जयन्तिया (आसाम)

प्रेतोद्धारिणी—राजू के पास महानदी में मिलने वाली पत्थरी नाम की नदी।

प्रथूदक—थानेश्वर से १४ मील पश्चिम की ओर यहीं ब्रह्मयोनि तीर्थ है।

ब

बरदान-तीर्थ—बड़ौदा। यहीं दुर्वासा ऋषि ने विष्णु को बरदान दिया था।

बसुधारा तीर्थ—यह स्थान बद्रीनाथ से ४ मील उत्तर की ओर है। अलखनन्दा यहीं से निकली है।

बदरिकाश्रम—बद्रीनाथ यहीं व्यास ऋषि का आश्रम था। नरनारायण का मन्दिर अलखनन्दा (विष्णुगंगा) के किनारे बना है। पास ही गरम पानी का कुंड है।

बक्रेश्वरी—बावला नदी जो बर्द्धवान ज़िले के कटवा स्थान के पास गंगा में मिलती है।

बल्लभि—भावनगरके पास गुजरात में स्थित है।

बल्लालबारी—बंगाल के राजा बल्लालसेन की राजधानी थो। आज कल इसे रामपाल कहते हैं। ढाका ज़िले के मुंशीगंज (विक्रमपुर) स्थान से दो मील है। पुराने क़िले के भग्नावशेष अबतक मौजूद हैं।

बलहरि—बिलारी (तुंगभद्रा के दक्षिण में)।

बनपुर—महाबलीपुर कारो मंडल तट पर स्थित है।

बागेश्वर—कमायूं में गंगा और गोमती के पास यहाँ मार्कंडऋषि का आश्रम था।

बागरदेश—बीकानेर।

बाहुदा—धुमेला (धवला) या बूढ़ी राप्ती अवध में बहतो है और राप्ती नदी से मिलती है। जब ऋषि लिखित ने इस नदी में स्नान किया तो उनकी कटी हुई बाँह ठीक हो गई। इसी से यह बाहुदा (बाँह देने वाली) कहलाती है।

बिभांडक आश्रम—ऋष्यश्रगाश्रम।

बिनाशनतीर्थ—वह स्थान जहां सरस्वती नदी थानेश्वर के पास पश्चिम की ओर मुड़कर मरूभूमि में नष्ट हो जाती है।

बिन्दुसार—गंगोत्री से दो मील दक्षिण की ओर स्थित है। गंगा जी को स्वर्ग से लाने के लिये भगीरथ जी ने यहीं तपस्या की थी। २ अहमदाबाद के उत्तर पश्चिम में एक स्थान सीतापुर है। कपिलजी का जन्मस्थान यहीं था। यहीं कर्दम ऋषि का निवास था।

बिङ्गार—अहमद नगर।

विरजाक्षेत्र—उड़ीसा में बैतरणी नदी के किनारे जजपुर के आस-पास १० मील तक जो प्रदेश है वह विरजाक्षेत्र कहलाता है।

बीणा—कृष्णा नदी। इसे वेन्वा भी कहते हैं।

बुद्ध-वन—बुधैन। गया ज़िले में तपोवन से ६ मील उत्तर की ओर है।

बोलोर—बालितस्तान या लघुतिब्बत।

वैदुर्य-पर्वत—सतपुरा पर्वत।

वैद्युत—कैलाश पर्वत का एक भाग जिसके पास ही मान सरोवर झील है।

बैद्यनाथ—देवघर

बंग—बंगाल। यह प्रदेश पांचभागों में विभक्त था। पुण्ड्र या उत्तरी बंगाल, समतत या पूर्वी बंगाल, कामरूप या आसाम, ताम्रलिप्त या दक्षिणी बंगाल और कर्ण-सुवर्ण या पश्चिमी बंगाल।

बंसगुल्म—यह एक पवित्र कुंड है जो अमरकंटक पठार पर नर्मदा के स्रोत से साढ़े चार मील की दूरी पर स्थित है।

ब्रह्मकुंड—वह कुंड जहां से ब्रह्मपुत्र नदी निकलती है।

ब्रह्मनाल—मणिकर्णिका (बनारस में)।

ब्रह्मर्षि—यमुना और ब्रह्मावर्त के बीच का प्रदेश। इसमें कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पांचाल और सूरसेन शामिल थे।

ब्रह्मतीर्थ—पुष्कर-सरोवर।

ब्रह्मावर्त—सरस्वती और दृशद्वती (मनु) नदियों के बीच का प्रदेश।

भ

भरद्वाज-आश्रम—यह आश्रम प्रयाग में स्वराज्य (आनन्द , भवन के सामने स्थित है। यहीं भरद्वाज ऋषि का निवास था।

भद्रानदी—वर्द्धा नदी (गोदावरी की सहायक)

भृगुकच्छ—भड़ौच यहीं बालि राजा ने शुक्राचार्य के आदेशानुसार यज्ञ किया था। तभी विष्णु जी ने वामन का अवतार धारण करके बलि राजा का राज्य हरण किया था।

भागनगर—हैदराबाद (दक्षिण)

भागप्रस्थ—बागपत, यह नगर मेरठ शहर से ३० मील पश्चिम की ओर है। यह उन पांच ग्रामों में से एक था जिनको महारत से पहले युधिष्ठिर ने कौरवों से मांगा था।

भागवती—बागमती, यह नदी नैपाल में है। नैपाल की राजधानी काठमांडू इसी नदी के किनारे स्थित है।

भारतवर्ष—सप्तसिन्धु (हिन्दुस्तान)

भीमनगर—कांगड़ा।

भीमपुर—विदर्भनगर या कुन्दिन पुर। यहीं विदर्भ राजा की राजधानी थी।

भीमस्थान—तख्ते भाई (पंजाब में ओहिन्द से ३० मील उत्तर पश्चिम में)

भीमरथी—भीमा नदी जो कृष्णा में मिलती है।

भोजकटपुर } **भोजपुर** } यह विदर्भ की दूसरी राजधानी थी। श्रीकृष्ण जी की धर्मपत्नी रुक्मिणी के रुक्मी नाम के भाई ने इसे बसाया था। एक भोजपुर मुज़फ़्फ़रनगर के पास है। दूसरा बरार में पूर्णा नदी के किनारे पर स्थित है। जिसे आज कल एलिचपुर कहते हैं।

भोटाङ्ग—भूटान।

भृगु-आश्रम—१ बलिया, इसकी पुरानी स्थिति गंगा और सरयू के पास थी। यहीं भृगुऋषि जी ने तपस्या की थी। २ भड़ौच में भी भृगुआश्रम था।

भृगुकच्छ—भृगुक्षेत्र।

म

मकुलपर्वत—कठुहापहाड़ जो बुद्ध गया से २६ मील दक्षिण की ओर है। यहाँ बुद्ध भगवान ने कुछ समय बिताया था।

मगध—बिहार, सोननदी इसकी पश्चिमी सीमा बनाती थी। जरासन्ध के समय में गिरिव्रजपुर (वर्तमान राजगिरि) इसकी राजधानी थी। फिर पाटलिपुत्र राजधानी बनी। अजात शत्रु ने इसे बहुत बढ़ाया। किसी समय मगध का राज्य बनारस से मुंगेर और सिंहभूम तक फैला हुआ था।

मणिपुर—कलिंग की राजधानी थी। यह चिलका झील मुहाने के पर मानिक पट्टन बन्दर गाह से मिलता है। यहाँ बभ्रुवाहन का राज्य था।

मछेरी—अलवर (मत्स्य देश)

मद्र—पंजाब की रावी और चनाब नदियों के बीच का देश। शाकल इसकी राजधानी थी। यहाँ राजा शल्य का राज्य था। कुछ लोगों के अनुसार मद्र को बाल्हिका भी कहते थे।

मधुमती—मोहवर या मोधवर नदी जो रानोद के पास निकलती है और मालवा में

सोनासो से ८ मील ऊपर सिंध में गिरती है।

मधुपुरी—मथुरा, इसे रामचन्द्र जी के छोटे भाई, शत्रुघ्न ने बसाया था।

मध्यदेश—थानेश्वर और इलाहाबाद के बीच का देश।

मध्यार्जुन—ट्रान्किबार से १६ मील पश्चिम में।

मन्दाकिनी—१ काली गङ्गा जो केदार पर्वत से निकलती है। २ पयस्वनी नदी जो चित्रकूट पर्वत के पास बहती है।

मन्दारगिरि—भागलपुर ज़िले में बांसी के पास की एक पहाड़ी है। कहा जाता है कि देवताओं ने इसी पहाड़ी की मथनी बना कर समुद्र को मथकर अमृत निकाला था।

मथुरा—यह सूरसेन की राजधानी थी। श्रीकृष्ण जी का जन्म पोतर कुंड के पास कारागार में यहीं हुआ था। मल्लपुर में उन्होंने चाणूर और मुष्टिक के साथ मल्ल युद्ध किया था। कुब्जाकूप के पास उन्होंने कुब्जा का कूबड़ अच्छा किया था। जहाँ कंस का टीला है वहाँ उन्होंने कंस का बध किया था। विश्रामघाट में उन्होंने विजय के बाद विश्राम (आराम) किया था। योगघाट के पास कंस ने माया या जोगनिद्रा को ज़मीन पर पटका था। मथुरा में ही ध्रुव का आश्रम था। कंकाली टीले के पास उपगुप्त का भिक्षुगृह था। मथुरा का दूसरा नाम मधुपुरी था। जो मधुपुरी के पास था। यहीं मधु का निवास था। मधु के पुत्र लवण को श्रीरामचन्द्र जी के भाई शत्रुघ्न ने मारा था।

मतिपुर—मन्दोर या मडावर स्थान बिजनौर से ८ मील उत्तर में है। प्रलम्ब।

मत्स्यदेश—जैपुर के आस-पास का अलवर प्रदेश। यहाँ राजा विराट का राज्य था। यहीं पांडवों ने गुप्तवास किया था। वैराट आज-कल का अलवर है मत्स्य से बिगड़ कर मछेरी बना जो अब अलवर कहलाता है।

मयराष्ट्र—मेरठ। यहीं अन्ध कोट (अन्दर कोट) स्थान पर मयदैत्य का किला था। कहा जाता है कि मयदानव की पुत्री और रावण की धर्मपत्नी मन्दोदरी बिल्लेश्वर महादेव की आराधना किया करती थी।

मयूर—मायापुरी, हरद्वार।

मरूदवृद्ध—रावी।

मरूस्थली—सिन्ध के पूर्व का विशाल रेगिस्तान।

मलद—शाहाबाद जिले का पश्चिमी भाग।

मलयवनगिर, महेन्द्र पर्वत—पूर्वी घाट।

मलयगिरि—कावेरी के दक्षिण में पश्चिमी घाट का दक्षिणी भाग।

मलयालम—मलाबार।

मल्लदेश—१ मुल्तान। २ वह देश जहाँ पारस नाथ पर्वत स्थित है जिसमें हजारीबाग और मानभूम जिलों के भाग शामिल है।

मल्लार देश—मालाबार, अपरान्तक देश का एक भाग।

मल्लपर्वत—पारस नाथ।

महति—माही नदी।

महाकौशिक—नैपाल की सप्त कोसी के मिलने से बना है।

महानदी—फल्गु, महानदा।

महासार, मसार—आरा से ६ मील पश्चिम में।

महेन्द्र—महेन्द्र माली पहाड़ियाँ (गंजाम जिले और पूर्व घाटी में) श्रीरामचन्द्र जी से हार जाने के बाद परशुराम जो यहीं रहने लगे। २ माही (मलाबार तट में)

महेश्वर—मैसूर।

महोदधि—बङ्गाल की खाड़ी (रघुवंश)

महोदय—कन्नौज।

महोत्सवनगर—महोबा (बुन्देल खंड में)

मानस—मानसरोवर झील हूणदेश में स्थित है। पूर्व से पश्चिम तक १५ मील लम्बी और उत्तर से दक्षिण तक ११ मील चौड़ी है। पर इसकी परिक्रमा करने में २५ दिन से कम नहीं लगते हैं।

मानिकपुर—मनिकालय (पंजाब में) यहां प्रसिद्ध बौद्ध स्तूप है।

मान्यखेत्र—मलखंड (कृष्णा नदी के किनारे)

मायापुरी—हरद्वार।

मार्कंड-आश्रम—कमायूं ज़िले में सरयू और गोमती की संगम बागेश्वर। यहां मार्कंड ऋषि ने तपस्या की थी।

मालव—मालवा, राजा भोज के समय धारा नगर इसकी राजधानी थी।

माल्यवानगिरि—पूर्वी घाट।

मालिनी—चम्पा नगर (भागलपुर के पास) २ मन्दाकिनी नदी ३ मालिनी नदी प्रलम्ब और अपर तल प्रदेश के बीच में होकर बहती है और अयोध्या से ५० मील ऊपर घाघरा में मिलती है। (शंकुतला का भरण पोषण करने वाले) कण्व ऋषि का आश्रम इसी नदी के किनारे था। आजकल यह नदी चौका कहलाती है।

माहिषक—मैसूर।

माहिष्मती—नर्मदा के दाहिने किनारे पर महेश्वर या महेश नगर जो इन्दौर से ४० मील दक्षिण की ओर है। यह हैहय या अनूप देश की राजधानी थी।

मिथिला—तिरहुत, जनकपुर।

मीनाक्षी—मदुरा।

मुक्तिनाथ—नारायण का विख्यात मन्दिर गंडक के निकास के पास तिब्बत की

सप्तगंडकी श्रेणी में स्थित है।

मुचकुण्ड—धौलपुर के पास एक झील है। यहां श्री कृष्णजी ने जरासन्ध के मित्र कालयवन को भस्म किया था।

मुद्गागिरि / **मुद्गलगिरि**—मुंगेर। बुद्ध भगवान के शिष्य मुद्गल पुत्र ने श्रुतविंशतिकोट नाम के एक धनी व्यापारी को बौद्ध धर्म की दीक्षा दी थी। सत हरिणी घाट में श्री रामचन्द्रजी ने रावण को मारने के बाद स्नान किया था। हत्याहरण हरदोई से २८ मील दक्षिण की ओर है। कहा जाता है कि श्री रामचन्द्र जी ने यहां भी स्नान किया था। वह स्थान जो सुल्तानपुर से १८ मील दक्षिण-पूर्व की ओर गोमती के किनारे पर बसा है।

मुरला—नर्मदा नदी।

मुरंडा—लम्पाका।

मूलस्थानपुर—मुल्तान, विष्णु ने नृसिंह का अवतार लेकर हिरण्यकश्यप को यहीं मारा था। नृसिंह देव के मन्दिर को इस समय भी प्रहलादपुरी कहते हैं। मल्लदेश का राजधानी यहीं थी।

मेकल—अमरकंटक पर्वत। नर्मदा यहां से निकलती है इसी से नर्मदा का दूसरा नाम मेकलकन्या है।

मेगनाद / **मेघनाद**—मेगना नदी।

मेधावीतीर्थ—कालिंजर के पास (बुंदेलखंड में)

मैनाक गिरि—शिवालिक श्रेणी।

मैनाकगिरि—सिवालिक की पहाड़ियां।

माही—माहीनदी मालवा में।

मोदागिरि—मुंगेर।

मोहनदेश—सरकार प्रदेश का दक्षिणी भाग।

मोसद्धदेश—मारवाड़।

मौली—रोहतास पहाड़ी।

मोरवन (मौरावा)—उन्नाव के पास, (किम्पुरुष) यहां मयूरध्वज की राजधानी थी।

मृगदाव—सारनाथ। यह स्थान बनारस से ६ मील है। बुद्ध भगवान ने अपना पहला व्याख्यान यहीं दिया था।

य

यमुनोत्री— हिमालय का बन्दर-पुच्छस्थान जहाँ से यमुना नदी निकलती है। यमुना नदी कई गरम चश्मों से आरम्भ होती है। जहां पर गरम और ठंडे पानी के सोते मिलाते हैं वहीं पर यात्री लोग स्नान करते हैं।

ययातिपुरी—जाजमऊ, कानपुर से ३ मील है। यहीं राजा ययाति के क़िले के भग्नावशेष बतलाये जाते हैं। सिद्धिनाथ महादेव का मन्दिर क़िले से कुछ ही दूर है।

यवद्वीप—जावा। कहा जाता है कि गुजरात के एक राजकुमार ने इस द्वीप को बसाया था।

यवननगर—जूनागढ़।

यशपुर—यशवुल उस स्थान पर स्थित था जहां पर आजकल हैदराबाद बसा है।

यष्टिवन—गया ज़िले के तपोवन से २ मील उत्तर में बसा है। इसे जक्तिवन भी कहते हैं। यहां बुद्ध भगवान ने बहुत से अद्भुत कर्म किये थे।

यहाग्रहक—निषाद रहता था राजा जो दशरथ और श्रीरामचन्द्र जी का मित्र था।

यज्ञपुर— उड़ीसा का जजपुर नगर बैतरणी नदी के किनारे पर स्थित है। इसे राजा ययाति केसरी ने छठी शताब्दी में बसाया था। दसवीं सदी में केसरी राजाओं की राजधानी यहीं रहीं। इसके बाद नृपकेसरी ने कटक में राजधानी बनाई यहीं विरजा का मन्दिर है।

र

रघुनन्दन—बङ्गाल और टिपरा के बीच की पर्वत श्रेणियाँ।

रत्नद्वीप—लङ्का।

रत्नपुर—दक्षिण कौशल या गोंडवाना की राजधानी।

रमन्य—(अरमन) पीगू और इरावदी का डेल्टा।

रन्तिपुर—रिन्तम्बुर चम्बल के किनारे। यहां रन्तिदेव का निवास था।

राजगृह—राजागिरि।

राजमहेन्द्री—कालिंग की राजधानी (दन्तपुर), विद्यानगर।

राजपुरी—रजौरी। काश्मीर के दक्षिण में और पूंच के दक्षिण-पूर्व में स्थित है।।

रामगंगा—सुवामा, उत्तरगा, उत्तानिका नदी।

रामगिरि—रामटेक (मध्यप्रान्त) यहां शम्बूक शूद्र ने तपस्या की थी।

रामगढ़ (गौर)—बलरामपुर।

रामह्रद— थानेश्वर के पास स्थित है।

रार—बङ्गाल का वह भाग जो गङ्गा के पश्चिम में है।

रामेस्वरसंगम—बरनास और चम्बल का संगम।

रावणहृद—कुमवानहृद (अनवतप्त) यह झील पचास मील लम्बी और २५ मील चौड़ी है। झील के बीच में एक पहाड़ी है। सतलज नदी यहीं से निकलती है। रावण कहा जाता हैं कि यहां स्नान किया करता था।

राहुग्राम—रैला (अष्टावक्राश्रम) हरिद्वार से १० मील।

रिक्षपर्वत—विन्ध्याचल का पूर्वी भाग (गोंडवाना) के पर्वत।

रेणुकातीर्थ—नाहन (पंजाब) से १६ मील उत्तर की ओर कहा ताजा है कि परशुराम की माता रेणुका यहाँ स्नान किया करती थीं।

रेवा—नर्मदा।

रैवत / **रैवतक**—जूनागढ़ के पास गिरनार पर्वत (दत्तात्रेय का आश्रम यहीं था। बलराम ने सूत को यहीं मारा था।

रोहण—सुमन कूट या एडम्स पीक, लङ्का में स्थित है।

रोहित—रोहतास्व, शाहाबाद के ज़िले में। कहा जाता है कि हरीश्चन्द्र के पुत्र रोहितास्व ने इसे बनवाया था।

रोहितक—रोहतक, दिल्ली से ४२ मील उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित है।

रोही—अफ़ग़ानिस्तान, लोह, काम्बोज।

ल

लक्ष्मणवती—लखनौटी (गौर) इसके भग्नावशेष माल्दा के पास मिलते हैं।

लम्पाका—लमग़ान, काबुल के उत्तरी किनारे पर।

लवपुर या लवकोट—लाहौर, इसे श्री रामचन्द्र जी के पुत्र लव ने बसाया था।

लांगुली—लूनी नदी (राजपूताना में)

लाट—गुजरात।

लीलाजन—फल्गू नदी

लोह—अफ़ग़ानिस्तान।

लोहित्य—ब्रह्मपुत्र नदी।

लोमसाश्रम—लोमसगिरि पहाड़ी, रजौली से ४ मील पूर्व की ओर जो गया ज़िले की नवादा तहसील में स्थित है। यहीं लोमस ऋषि का आश्रम है।

व

वत्स्य—इलाहाबाद के पश्चिम में यहां राजा उदयान का राज्य था। कौशाम्बी इसकी राजधानी थी।

वत्स्यपत्तन—कौशाम्बी।

वनवासी—मैसूर ।

वनायु—अरब ।

वराहक्षेत्र—बारामूला । (काश्मीर)

वरेन्द्र—राजशाही (बंगाल)

वरसान—बरसाना (मथुरा जिले में) यहीं राधिका जी पैदा हुई थीं ।

वशिष्ठाश्रम—अर्बुद (आबू) पर्वत पर । २ अयोध्या के पास ।

वक्षु—आक्सस नदी ।

वाग्मती—बाघमती नदी (नैपाल में)

वादरि—सौवीर, ईदर (गुजरात प्रान्त में)

वारणावत—बरनावा, मेरठ से १६ मील उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित है । दुर्योधन ने पांडवों को जलाने का प्रयत्न यहीं किया था ।

वाराणसी—बनारस । चीनी यात्री ह्वानसांग ने लिखा है कि यहां २० विशाल देव-मन्दिर हैं । इन के गुम्बज और भवन कामदार पत्थर और लकड़ी के बने हैं । इनके चारों ओर वृक्षों की शीतल छाया रहती है । वे शुद्ध जल की धाराओं से घिरे हुए हैं महादेव की मूर्ति पीतल (सोने) की बनी है और १०० फ़ुट से कुछ ही कम है । मूर्ति बड़ी बड़ी गम्भीर और प्रतिभाशाली है । वह ऐसी मालूम होती है मानो जीवित हो । विश्वनाथ की असली मूर्ति औरंगज़ेब ने मन्दिर के पीछे ज्ञानवापी कुए में डालदी गई थी । वर्तमान लिंग उस के बाद स्थापित किया था ।

वाल्मीकिआश्रम—बिठूर श्रीरामचन्द्र जी की आज्ञा से लक्ष्मण जी ने सीता जी को यहीं छोड़ा था । वहीं उनके दो पुत्र हुए थे । कुछ वर्ष हुए गंगा जी की तली में एक बाण मिला था । कहाजाता है कि लव ने अश्वमेध के अवसर पर यही बाण श्री रामचन्द्र जी पर छोड़ा था ।

वाहिक या वाह्लिक—केकय के उत्तर में व्यास और सतलज के बीच का प्रदेश । इसे वाल्हिक (तक्क देश) भी कहते हैं । २ बलख ।

वाराणसी कटक—उड़ीसा का कटक नगर महानदी और काठजोड़ी नदी के संगम पर स्थित है ।

वाशिष्ठी—गोमती नदी ।

वितस्ता—झेलम नदी ।

विदर्भनगर—कुन्दिनपुर ।

विद्यानगर—बिजया नगर तुंगभद्रा नदी के किनारे बिजयनगर या कर्णाट राज्य की राजधानी थी ।

विदिशा—भिलसा भोपाल राज्य में वेतवा के किनारे स्थित है ।

विराट—बैराट दिल्ली से १०५ मील दक्षिण पश्चिम की ओर और जैपुर से ४१ मील

उत्तर की ओर स्थित है। यह मत्स्यदेश के विराट राजा की राजधानी थी। यहीं पांचों पांडवों ने गुप्त वास किया था।

विदर्भ—१ बरार। यहीं भीष्मक का राज्य था। भीष्मक की कन्या रुक्मिणी का विवाह श्रीकृष्ण जी से हुआ था। कुन्दिन नगर और भोजकटपुर यहां के प्रधान नगर थे। २ विदार।

विदेह—तिरहुत। यहां सीता जी के पिता राजा जनक का राज्य था। इसका दूसरा नाम मिथिला था। सीतामढ़ी से १ मील उत्तर की ओर जनकपुर में उनकी राजधानी थी। यहां से ६ मील की दूरी पर धेनुका में (वहां अब वन है) श्री रामचन्द्र जी ने हर धनुष तोड़ा था। विदेह का राज्य उत्तर में हिमालय, दक्षिण में गंगा जी से पूर्व में कौशिकी (कोसीनदी) से और पश्चिम में गंडक से घिरा हुआ था। (त्रिभुक्ति, मिथिला, त्रिहुत)

विन्ध्यपाद—सतपुड़ा पर्वत (वायुपुराण)।

विन्ध्याचल—विन्ध्यवासिनी का मन्दिर विन्ध्याचल मिर्जापुर) के पास पहाड़ी पर स्थित है। पर योगमाया का मन्दिर नगर में गंगा जी के पास है। विन्ध्याचल नगर प्राचीन पम्पापुर में शामिल था।

विपासा—व्यास नदी। कहा जाता है कि जब विश्वामित्र ने बसिष्ठ के लड़कों को मार डाला तब बशिष्ट ऋषि अपने हाथ पैर बाँध कर इस नदी में कूद पड़े। पर ब्रह्महत्या रोकने की इच्छा से नदी ने उमड़ कर बशिष्ट जी को किनारे पर उछाल दिया जिससे उनके पाश (फन्दे) टूट गये। इसी से इस नदी का नाम विपासा (फन्दा तोड़ने वाली) पड़ गया।

विशाल—विसाढ़।

विशालछत्र (विशाला)—हाजीपुर। सोनपुर के पास गंडक और गंगा का संगम है।

विशाषा—अवध।

विश्वामित्राश्रम—बक्सर यहीं श्रीरामचन्द्र जी ने ताड़का राक्षसी को मारा था। यहीं वामनदेव का जन्म हुआ था। देवकुंड के पास विश्वामित्र का आश्रम बतलाया जाता है। यह गया से २५ मील उत्तर-पश्चिम की ओर है।

विष्णुमाली—केशवती नदी (नैपाल) में।

वीतभयपत्तन
विठभयपत्तन } — बीठा ईलाहाबाद से ११ मील दक्षिण पश्चिम की ओर है।

वीरसर—बिलसा, सांकास्य से २२ मील उत्तर में यहीं बुद्ध भगवान ने १२ वी वर्षा ऋतु बितायी थी।

वेंगी—आन्ध्र देश की राजधानी गोदावरी और कृष्णा के बीच में पलूट झील के उत्तर-पश्चिम में स्थित थी।

वेदगर्भपुरी—बक्सर (शाहाबाद ज़िले में) बक्सर नगर व्यघ्रसर से बिगड़कर बना है। इस नाम का ताल गौरीशंकर के मन्दिर के पास स्थित है।

वेदवती—बंगाल की दामूदा नदी।

वेणा या वेरवा—कृष्णा नदी।

वेणुवन विहार—राजगिरि के उत्तर पूर्व में बांस के बन में इस नाम का विहार राजा बिम्बसार ने बनवाया था।

वेरवा—कृष्णा की एक धारा जो पश्चिमी घाट में निकलती है। २ कृष्णा, ३ वैनगंगा (गोदावरी की सहायक)

वेसनगर—बेसनगर भोपाल राज्य में सांची के पास है। इसे चेत्यागिरि भी कहते हैं। इसी स्थान की कन्या देवी से अशोक ने विवाह किया था। उसके दो पुत्र हुए। उन्हें पीपल (बोधि) वृक्ष की शाखा देकर अशोक ने उन्हें लंका में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिये भेज दिया था।

वेत्रवती—वेतवानदी।

वैराटपत्तन—ढिकुली (कमायूं)

वैराटपट्टन—कमायूं का ढिकुली नगर। गोविशन के प्राचीन राज्य की राजधानी यहीं थी।

वैसाली—मुज़फ़्फ़रपुर (तिरहुत) ज़िले का बसाढ़ नगर जो हाजीपुर से १८ मील उत्तर की ओर गंडक नदी के बाँये किनारे पर स्थित है। यहीं लिच्छावी या वृजी लोगों की राजधानी थी।

वृन्दावन—वृन्दावन नगर मथुरा के पास है। यहीं श्रीकृष्ण और गोपिकाओं की लीला का स्थल था। औरंगजेब के हमले के डर से गोविन्द जी की असली मूर्ति जैपुर को और मदनमोहन की मूर्ति करौली को भेज दी गई थी गोविन्द जी का पुराना मन्दिर राजा मानसिंह ने बनवाया था।

व्यासाश्रम— मनल गांव में (जो बद्रीनाथ के पास है, व्यास जी का आश्रम था।

व्यासकाशी—रामनगर जो गंगा की दूसरी ओर बनारस के सामने बसा है। व्यास जी का मन्दिर महाराजा साहब के महल के पास है।

व्रज—गोकुल, मथुरा के पास यमुना जी के दूसरे किनारे पर स्थित है। यहीं नन्द ने कृष्ण जी को बचपन में पाला था। आगे चलकर वृज में बिन्द्रावन और दूसरे नगर शामिल हो गये। बाहर की ओर पूतनाखार में श्रीकृष्ण जी ने पूतना को मारा था। आजकल के वृज को प्राचीन समय में अनूपदेश कहा करते थे।

श

शतद्रु—सतलज नदी। इसे घग्घर भी कहते हैं। सरहिन्द

शान्ततीर्थ—जुगेश्वरी घाट (नैपाल) में हैं यहां मदोरिका नदी बाघमती (बाघमती) में मिलती है। कहा जाता है कि पार्वती जी ने यहीं तपस्या की थी।

शंकराचार्य—(तख्त सुलेमान), श्रीनगर के पास एक पर्वत जहां अशोक के पुत्र कुनाल ने एक बौद्ध विद्यालय स्थापित किया था यहीं श्री शङ्करा चार्य ने शिवजी की पूजा का प्रचार किया।

शंकरतीर्थ—नैपाल में पाटन के पास का स्थान जहां बाघमती और मणिमती नदियों का संगम है।

शंखोद्धार—बेटि द्वीप जो गुजरात प्रान्त में कच्छ की खाकी के सिरे पर स्थित है। कहा जाता है कि विष्णु जी ने शखासुर (दैत्य) का संहार करके यहीं वेदोद्धार किया।

श्रावस्ती—सेहत सेहत नगर राप्ती नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है।

श्रीकंठ—कुरुजंगल, इस की राजधानी त्रिलासपुर थी जो सहारनपुर से ३३ मील उत्तर पश्चिम को ओर है।

श्रीनगर—काश्मीर की राजधानी जिसको राजा प्रवर सेन ने छठी शताब्दी में बनवाया था।

श्रीरंगपट्टन—सिरिंगापट्टम (मैसूर में)

श्रीरंगक्षेत्र—श्रीरंगम। मद्रास प्रान्त में त्रिचनापली के उत्तर में एक तीर्थ है यहां पांड्या राजाओं ने विष्णुजी का एक विशाल मन्दिर बनवाया था।

श्रीशैल—मद्रा की पलनी पहाड़ियां जिन से मलय पर्वत का उत्तरी भाग बना है।

श्रीक्षेत्र—जगन्नाथ पुरी। गंगावंशी अनंग भीम देव ने यहाँ के मन्दिर को ११९८ ई० में बनवाया था।

श्रुघ्न—काल्सी। (सुग्घ) यह थानेश्वर से ४० मील और सहारनपुर से २० मील उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित है।

शृंगवेरपुर—गंगा के किनारे का सिंगरौर गांव जो इलाहाबाद से १८ मील उत्तर-पश्चिम को ओर है स्थित।

स

सकृकुमारिका—पंजाब के सिरमौर ज़िले के नाहन नगर से १६ मील उत्तर में है। यह रेणुका तीर्थ के पास है।

सदानीरा—करतोया नदी जो रंगपुर और दीनाजपुर ज़िले में होकर बहती है। कहा जाता है कि यह नदी शिव जी के पसीने से आरम्भ हुई थी। अवध की एक नदी जिसका महाभारत और शतपथ ब्राह्मण में उल्लेख है।

समन्त (पनचक)—कुरुक्षेत्र

समतट—पूर्वी बंगाल ।

समा—लोहिता या ब्रह्मपुत्रा नदी ।

सम्बूक-आश्रम—रामटेक, नागपुर के उत्तर में है । यहीं शम्बूक (शूद्र) ने तपस्या की थी ।

समेतशेखर—पारसनाथ (हज़ारी बाग़ ज़िले में)

सरस्वती—१ सरस्वती नदी सिरमौर की पहाड़ियों से निकलती है और अदबदरी के पास मैदान में प्रवेश करती है । चलौर गांव के पास,यह नदी बालू में लुप्त हो जाती है पर भवानीपुर के पास फिर प्रगट होती है । बल छप्पर के पास यह फिर लुप्त हो जाती है और बरखेड़ा पास फिर प्रगट होती है । विहोआ के पास उरनई में मार्कण्ड नदी इससे मिलती है । अन्त में यह (सरस्वती) नदी घग्घर में मिलती है । २ गुजरात में सोमनाथ के पास को एक नदी ।

सरावन—उन्नाव से लगभग २० मील दक्षिण-पूर्व की ओर है । यहांराजादशरथ ने भूल से श्रवण ऋषि को मार डाला था । जिससे उनके अन्धे पिता ने राजा-दशरथ को श्राप दिया था ।

सरावती—गुजरात की साबरमती नदी (सम्भ्रमती, कृतवती, चन्दना, गिरिकर्णिका काश्यपी गंगा) जो अहमदाबाद होती हुई खम्भात की खाड़ी में गिरती है २ फैजाबाद (अवध) ३ राप्ती के किनारे वाला सेहत मेहत नगर ।

सरयू—घाघरा ।आयोध्या नगर इसी के किनारे स्थित है ।

सप्तगांव—मगरा के पास बंगाल का एक प्राचीन गांव । रोमनकाल में यहां बहुत व्यापार होता था ।

सप्तकुलाचल—महेन्द्र, मलय, सह्य, सुक्तिमान, गन्धमादन, विन्ध्या और पारिपात्र नाम के सात प्रधान पर्वत ।

सप्त-मोक्षदापुरी—अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवन्ती, द्वारावती ।

सलातुर—लाहोर गांव जो ओहिन्द (पंजाब) से ४ मील उत्तर-पश्चिम की ओर है । पाणिनी मुनि का जन्म यहीं हुआ था ।

ससस्थली—अन्तर्वेद । गंगा और यमुना के बीच का द्वाबा ।

सहसराम—शाहाबाद ज़िले का सहसाम ।

सह्याद्री—कावेरी के उत्तर में पश्चिमी घाट का उत्तरी भाग ।

साकद्वीप—मध्यएशिया । साका लोगों का देश ।

साकल—मद्रदेश (चनाव और रावी के बीच का देश) अपगा नदी के किनारे सँगलवलतिबा जो रावी नदी के पश्चिम में है !

साकेत—अवध । सुजनकोट या संचनकोट जो उन्नाव से ३४ मील उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित है ।

सागर संगम—गंगा का मुहाना (यहीं कपिल) मुनि ने सगर के पुत्रों को नष्ट

किया था। संगम प्रयाग में २ यमुना, चम्बल, और सिन्ध का संगम इटावा और काल्पी के बीच में ३ तीग कोसी।

साकंभरी—मेवाड़। २ साम्भर झील (राजपूताना)। कहा जाता है कि यहाँ के देवदानी कुए में राजाययाति को धर्मपत्नी देवयानी को उनकी सौत समिष्टा को ढकेल दिया था।

सामूगढ़—फातेहफ़बाद (आगरा से ६ मील पूर्व में)। यहीं औरंजेब ने दारा को हराया था।

सारंगनाथ—सारनाथ (मृगदाव, ऋषिपत्तन, इशिपत्तन)

सालग्राम—गंडकके निकास के पास एक स्थान जहाँ भरत और पुलह ऋषि ने तपस्या की थी।

सांकल—साकल।

सालिवाहनपुर—पत्तन।

सांकस्य—संकसिया बसन्तपुर जो इक्षुमती (काली नदी) के किनारे स्थित है। यह अतरंजी और कन्नौज के बीच में।फतेहगढ़ (फर्रुखबाद के ज़िले) में स्थित है। यह जनक के भाई राजाकुसध्वंज की राजाधानी थी।

स्थारिका—श्री नगर (काश्मीर) के हरिपर्वत पर स्थित है। यहीं कश्यप ऋषि का आश्रम था।

सिवाप्रस्थ—धवला नदी।

सितादु—सतलज नदी।

सिद्धपुर—सिद्धौर, बाराबंकी से १६ मील पश्चिम की ओर २ गुजरात का सिवपुर यहीं कर्दम ऋषि का आश्रम और कपिल मुनिका जन्म स्थान था।

सिद्धाश्रम—शाहाबाद ज़िले का बक्सर नगर। सोरा और गंगा के संगम पर श्री विष्णु जी ने वामन का अवतार यहीं लिया था।

सिन्धु—सिन्ध नदी।

सिप्रा—इस नदी के किनारे उज्जैन स्थित है।

सिवठ—नाथदार, कानास नदी के किवारे पर उदयपुर २२ मील उत्तर पूर्व की ओर है। औरंजेब के आक्रमण के डर से राणा राजसिंह ने केशव देव की पुरानी मूर्ति मथुरा से लाकर यहां रक्खी।

सविस्थान—सवान या सेहवान (सिन्ध नदी के किनारे स्थित है।)

सिंहल—लंका।

सिंहपुर—कटास या कटाक्ष (पिंडदादन खाँ) साल्टरंज के उत्तर में हैं।

सीतानदी—यारकन्द याज़रफशां नदी। इसी के किनारे यार कन्द शहर स्थित है। ज़रफशां नदी।

सुचक्षु—आक्सास नदी जिसे वक्षु भी कहते थे।

सुदामापुरी—पोर बन्दर (कठियावाड़ में ।)
सुधापुर—सुन्दा (उत्तरी कनारा)
सुधर्मनगर—थातुन, सोटांग नदी के किनारे मर्तवान के उत्तर में ।
सुक्तिमती—१ उड़ीसा की सुपर्ण रेखा नदी । २ वेतवा नदी जो प्राचीन चेदि राज्य में होकर बहती है ।
सुभद्रा—इरावती नदी
सुभवस्तु—सुवस्तु (स्वात नदी) । पुष्करवती या पुष्कलवती (गांधार देश) की राजधानी इसी नदी के किनारे काबुल नदी के संगम पर स्थित थी । २ उद्यान, में ही राजा शिवि ने कबूतर को बचाने के लिये भूखे बाज को अपना मांस दिया था ।
सुलक्षिणा—चन्द्रावती या गेगन नदी जो गंगा में गिरती है ।
सुमनकूट—लंका की रामपद या एडम्स पीक नाम की चोटी ।
सुमेरूपर्वत—रुद्र हिमालय जहां से गंगा नदी निकलती है । पांच चोटियों के कारण इसे पंच पर्वत भी कहते हैं इसकी पांच चोटियां ये हैं :रुद्र हिमालय, विष्णुपुरी, ब्रह्मपुरी, उदूगाकंठ और स्वर्गारोहिणी । चार पांडव लोग स्वर्गारोहिणी में ही स्वर्ग सिधारे थे ।
सुम्ह—१ अराकान, २ दामलिप्त या ताम्रलिप्त (तामलूक) ३ इसी नाम का एक प्रदेश पंजाब में था जिसे अर्जुन ने जीता था ।
सुम्धदेश—टिपरा और अराकान ।
सूरसेन—वह पुराना राज्य जिसकी राजधानी मथुरा थी ।
सुराष्ट्र—१ गुजरात २ सूरत ।
सूर्यपुर—सूर ।
सुशोमा—पंजाब की सिन्ध नदी
सुशुनी—राजमहल की पहाड़ियां ।
सुवर्णभूमि—ब्रह्मदेश ।
सुवर्णग्राम—ढाका ज़िले का सुनार गांव (ढालेश्वरी नदी पर)
स्यन्दिक—सई नदी, जौनपुर से ७ मील दक्षिण और बनारस से २५ मील उत्तर में स्थित है ।
सूर्पारक※—सोपारा
सूरपारक—१ सूरत । २ कृष्णा के मुहाने पर । ३ कोल्हापुर के दक्षिण में, उत्तरी कोनकन ।

※ ततः शूर्पाकं देशं, सागरस्य निर्ममे ।
सहसा जामदग्नस्य, सोपरान्तमहीतलम् ॥
महाभारत । (शान्तिपर्व अध्याय ४६)

सूर्य नगर—श्री नगर (काश्मीर)

सेक—१ झजपुर के पास। अजमेर के दक्षिण पूर्व में। २ चर्मणवती (चम्बल) के दक्षिण में और अवन्ती के उत्तर में। सहदेव ने इस प्रदेश को जीता था।

सेमुलपुर—सैमा (सम्भलपुर) प्राचीन समय में यह स्थान हीरों के लिये प्रसिद्ध था

सेतिका—अयोध्या।

सेतुबन्ध—भारतवर्ष और लंका के बीच का पुल जिसे श्री रामचन्द्र जी ने सुग्रीव की सहायता से लंका विजय करने के लिये बनाया था।

सूकरक्षेत्र—सोरों ऐटाजिले में कासगंज और बदायूं के बीच में गंगा के पास एक पुराना नगर है यहीं विष्णु जी ने। बाराह का अवतार धारण करके हिरण्याक्ष का वध किया था। यहां बाराह लक्ष्मी का मन्दिर है। तुलसीदास जी बचपन में यहीं पले थे।

सुक्तिमान-पर्वत—विन्ध्याचल का वह भाग जो पारिपात्र और रिक्षपर्वत को मिलाता है मिर्जापुर ज़िले की विन्ध्याचल पहाड़ियां भी इसी में शामिल हैं।

सोना—सोन नदी

सोनितपुर—गढ़वाल राज्य में केदार गंगा के किनारे स्थित है।

सोमपर्वत या सोमगिरि—अमरकंटक पर्वत २ हाला पर्वत का दक्षिणी भाग।

सोमतीर्थ—प्रभास।

सौराष्ट्र—गुजरात, यह प्रदेश सिन्ध से लेकर भड़ौचे तक फैल हुआ था। इसमें वर्तमान गुजरात, कच्छ और काठिया वाड़ शामिल थे।

सौवीर—एदर या वदरी (गुजरात प्रान्त में)

स्तम्बपुर—ताम्रलिप्त ताम लुक।

स्थानेश्वर—थानेश्वर।

स्तम्बतीर्थ—कम्बे या खम्भात।

ह

हरक्षेत्र—भुवनेश्वर (उड़ीसा)

हस्तिनापुर—यह नगर दिल्ली के उत्तर-पूर्व में गंगा की बाढ़ के प्रदेश में स्थित है। पास ही गंगा का खादर है। यह मेरठ से २२ मील उत्तर-पूर्व की ओर बिजनौर से दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित है। यहां कौरवों की राजधानी थी। पर जन्मेजय के प्रपौत्र निचक्षु ने यहां से हटा कर कौशाम्बी में अपनी राजधानी बनाई।

हातक—हूणदेश, मानसरोवर झील के पास का उपदेश।

हारीताश्रम—एकलिंग, उदयपुर के उत्तर में स्थित है।

हिंगुला—हिंगलाज, बिलोचिस्तान में हिंगुला नदी के पास एक पहाड़ी है। यहां महामाया (दुर्गा) का मन्दिर है।

हिमवन्त—तिब्बत।

हिमाद्रि—हिमालय।

हिरम्ब—कछार।

हिरण्यबाहु—सोन नदी।

हिरण्य पर्वत—मुंगेर (मुद्गलागिरि)

हिराण्यवती—छोटी गंडक, अजित वती।

हुष्कपुर—शेक्रो (लार में) २ बारामूला (काश्मीर में)

हेमकूट—पटना जिले में राजगिरि की रत्नगिरि पहाड़ी।

हेमवती—ऋषिकुल्य। इस नदी के किनारे गंजाम नगर स्थित है। यह नदी महेन्द्र पहाड़ियों से निकलती है।

हैहय—खानदेश (औरंगाबाद और दक्षिण मालवा) यहां कार्तवीर्यार्जुन का राज्य था। परशुराम ने उसका संहार किया था। माहिषती राजधानी थी जिसे आजकल महेश्वर कहते हैं।

ह्लादिनी—ब्रह्म पुत्र नदी।

ह्पियान—पामगान श्रेणी के उत्तरी-पूर्वी सिरेपर ओपियान प्रदेश। यहां पर सुरस्थान की राजधानी थी।

क्ष

क्षारकी—औरंगाबाद।

क्षीरग्राम—बर्दवान से २० मील उत्तर में स्थित था।

त्र

त्रिगर्त—१ जालन्धर २ तिहोरा सतलज के किनारे ३ कांगड़ा।

त्रिपदि—तिरुपति या त्रिपति मद्रास प्रान्त का एक तीर्थ स्थान।

त्रिपुरी (त्रयपुर)—नर्मदा के किनारे का तिओर नगर। यहीं राजा कोकल्ल देव की राजधानी थी। २ चेदि।

त्रिमल्ल—यहां से तिरुपति ६ मील पश्चिम में है। यहीं शेषाचल पर बाला जी का प्रसिद्ध मन्दिर है। पाप नाशिनी गंगा इसी पर्वत से निकलती हैं।

त्रिवेणी—मुक्तवेणी, दक्षिण प्रयाग (हुगली के उत्तर में) १ गंगा यमुना और सरस्वती का।

त्रितिया—तीस्ता नदी।

त्र्यम्बक गोदावरी के निकास के पास एक तीर्थ स्थान। जो अंगांदी से आठ माल है। पम्पा नदी इसी पहाड़ से बिकलतो है और तुंगभद्रा में गिरती हैं। इस पर्वत पर श्रीरामचन्द्र जी सुग्रीव और हनुमान् जो प्रथम वार मिले थे।

त्रिस्रोता—१ रंगपुर को तीस्ता नदी २ गंगा।

ऋ

ऋष्य-श्रृंगाश्रम—ऋष्य-श्रृंग का आश्रम जो सिंवेश्वर (भागलपुर) में स्थित है बिभाँडक ही ऋष्य मदुरा श्रृंग के पिता थे।

ऋषभपर्वत—र। की पलनी पहाड़ियां २ हेमकूट (राजगिरि की एक पहाड़ी)

ऋषिकुल्या—हैमवती इस नदी के निकारे गंजाम स्थित है। यह नदी महेन्द्र पर्वत से निकलती है।

ऋषिपत्तन—सारनाथ बनारस के पास।

ऋष्यमूक—तुगंभद्रा के किनारे का एक पर्वत।

वैदिक भूगोल

[क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय, अध्यापक, प्रयाग विश्वविद्यालय]

भूर्भुवः स्वरिमे लोका यतो जन्मादि लेभिरे।
तं ध्यात्वा भारतस्यास्य निवेशः श्रौत उच्यते॥

वेद पद से मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् का ग्रहण होता है। अतः वैदिक भूगोल जानने के लिये हमें मन्त्रादिक वेद के चारों विभाग का उपयोग करना चाहिए। श्रौत-सूत्र, गृह्य-सूत्र और धर्म-सूत्र स्मार्त ग्रन्थ हैं, वेद नहीं हैं। इस कारण से उनमें जो भौगोलिक बातें पाई जाती हैं उनका उपयोग यहाँ नहीं किया जायगा। परन्तु स्मार्त ग्रन्थ होने पर भी यास्क के निरुक्त का उपयोग किया जायगा। इसका कारण यह है कि वह वैदिक शब्द और मन्त्रों का व्याख्यान है।

वेद में जगत् का विभाग तीन लोकों में किया गया है। वे तीन लोक पुराणादिक की तरह पृथिवी, स्वर्ग और पाताल नहीं हैं परन्तु (१) पृथिवी, (२) अन्तरिक्ष अर्थात् वायुलोक और (३) द्युलोक अथवा स्वर्ग हैं। मेघ, विद्युत् और वायु अन्तरिक्ष में हैं और सूर्य हैं स्वर्ग में। 'स्वर्' शब्द सूर्य और स्वर्ग दोनों के लिये आता है। ब्राह्मणों में कहीं कहीं इन तीन लोकों के लिये "भूः" "भुवः" और "स्वः" ये तीन नाम ("महाव्याहृति") आये हैं। ऋक्संहिता में पृथिवी अन्तरिक्ष और द्युलोक भी तीन तीन विभागों में विभक्त पाये जाते हैं। परन्तु कहीं कहीं तो "तीन पृथिवी" या "तीन द्युलोक" पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोक के लिये आया है। वैदिक शब्दकोश "निघण्टु" में देवताओं के नाम तीन विभाग में दिये हुए हैं, प्रथम में पृथिवी में रहने वाले देवता हैं, द्वितीय में अन्तरिक्ष में रहनें वाले और तृतीय में स्वर्ग वासी देवता हैं। यही लोक विभाग वैदिक साहित्य में सर्वत्र पाया जाता है।

इन में पृथिवी ही से हम लोगों का कार्य है। "पृथिवी' या "पृथ्वी" शब्द का अर्थ है "विशाल"। ऐसे उसी अर्थ में "मही" शब्द आया है और यास्क के मत से पृथिवी के पर्याय रूप "गो" शब्द का वही अर्थ है ("गौरिति पृथिव्या नामधेयम्। यद् दूरङ्गता भवति")। पृथिवी की गति के विषय में कोई श्रौत

प्रमाण नहीं है। पृथिवी चक्र की तरह वृत्ताकार है यह ऋक्संहिता के कई मन्त्रों से स्पष्ट है। ऋक्संहिता १०-८९-४ में कहा गया है कि इन्द्र ने पृथिवी और द्युलोक को दृढ़ किया है जैसे कि दो चक्र अक्ष के द्वारा दृढ़ रूप से धृत होते हैं। परन्तु पृथिवी गोलाकार भी है और उसके दूसरे तरफ़ आकाश है ऐसा प्रमाण वेद में कहीं नहीं मिलता है। सूर्य का जब अस्तमन होता है तब सूर्य कहाँ जाता है और कैसे पुनः पूर्वदिशा में आ जाता है, यह प्रश्न वेद में कहीं कहीं उठाया गया है (यथा ऋ० स० १।३५।७) परन्तु इस प्रश्न की बड़ी विचित्र मीमांसा ऐतरेय ब्राह्मण ३।४४ में दी गई है। वहाँ सूर्य के विषय में कहा गया है कि "वह कभी अस्त नहीं होता है, न उदित होता है। लोग जो समझते हैं कि सूर्य अस्त होता है वह ऐसा है कि दिन के अन्त को पहुँच कर सूर्य अपने को पलट लेता है और रात्रि को नीचे करके और दिन को ऊपर करके (फिर लौट आता है), और जो लोग समझते हैं कि वह प्रातःकाल में उदित होता है वह ऐसा है कि सूर्य रात्रि के अन्त को पाकर अपने को (फिर) घुमा लेता है, और दिन को नीचे करके और रात्रि को ऊपर करके (पश्चिम की ओर चलता है)। वास्तव में वह कभी अस्त नहीं होता है।" इसका अर्थ यह है कि सूर्य के एक भाग में दिन या प्रकाश है और दूसरे में रात्रि या अन्धकार है। सूर्य जब पूर्व से पश्चिम की ओर चलता है तब प्रकाश वाला भाग हमारी तरफ रहता है और अन्धकार वाला भाग ऊपर। इससे हमें दिन को प्रकाश मिलता है। पश्चिमाकाश को पहुँच कर सूर्य अन्धकार वाला अंश हमारी तरफ़ और प्रकाशवाला अंश देवों की तरफ़ करके पूर्व दिशा में लौट आता है। इससे रात्रि को पृथिवी अन्धकार में रहती है। ऋक्संहिता १।११५।५, ५।८१।४, ६।९।१, ७।८०।१, १०।३७।३ प्रभृति का यही तात्पर्य सा विदित होता है। ऐतरेय ब्राह्मण ८।२५ में कहा गया है कि समुद्र से पृथिवी घिरी हुई है परन्तु पुराण की तरह पृथिवी का द्वीपों में विभाग वेद में नहीं पाया जाता है।

इस पृथिवी का बहुत अल्प भाग वेदयुग में आर्यों को ज्ञात था। ऋक्संहिता में जितने भौगोलिक नाम पाये जाते हैं वे सब पंजाब, कश्मीर और अफ़गानिस्तान के हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि आर्य लोग उस समय इन स्थानों में रहते थे और इनके बाहर किसी देश से विशेष सम्बन्ध नहीं रखते थे। क्रमशः आर्य लोग मध्यदेश की ओर बढ़े। ऋक्संहिता ३।३३ और ३।५३ से विदित होता है कि पंजाब के दक्षिण की ओर बढ़ने में विश्वामित्र अग्रणी था। वह तृत्सु-भरत वंश के सुदास् राजा को और उनके लोगों को लेकर विपाश् (व्यास) और शुतुद्री (सतलज) नदी पार होकर मध्यदेश के ओर आया। और और आर्य जाति के लोग बाद को क्रम से इधर को बढ़े। कुरुक्षेत्र के आस पास में सदियों तक प्रधान प्रधान आर्य जातियाँ रहीं और यहीं यजुर्वेद और ब्राह्मणों के युग की सभ्यता का केन्द्र था। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम काण्ड के चतुर्थ अध्याय के प्रथम काण्ड में इस देश से पूर्व की ओर आर्यों के बढ़ने की सूचना हमें मिलती

है। सरस्वती के तट पर विदेघ माथव नाम का राजा था, जिसका पुरोहित था गोतम राहूगण। ये दोनों अग्नि वैश्वानर को अनुसरण करते हुए सदानीरा नदी के तट तक पहुँचे। अग्नि वहाँ रुक गया और राजा विदेघ माथव सदानीरा के उस पार जाकर रहने लगा। शतपथ ब्राह्मण कहता है कि यह सदानीरा नदी कोसल और विदेह राष्ट्र की सीमा है। यद्यपि पहिले ब्राह्मण लोग इस नदी के पूर्व में नहीं रहते थे शतपथ ब्राह्मण के समय उसके पूर्व पार में बहुत से ब्राह्मण रहते थे और वहाँ यज्ञ करते थे (श० ब्रा० १।१।४।१४-१६)। ब्राह्मण युग में पूर्व भारत में आर्य निवास बहुत कम था। परन्तु क्रमशः ब्राह्मण्य सभ्यता सम्पूर्ण आर्यावर्त में फैल गई। शतपथ ब्राह्मण के चतुर्दश काण्ड के अन्तर्गत बृहदारण्यक उपनिषद् में हम देखते हैं कि विदेहराज जनक ब्रह्मविद्या का एक बड़ा भारी भक्त था। विन्ध्य के दक्षिण में वैदिक सभ्यता का प्रसार होने में काफ़ी विलम्ब हुआ था।

स्वर्गत लोकमान्य बाल गङ्गाधर तिलक महाशय के मत में वैदिक आर्य लोग सुमेरु (North Pole) से आये थे और उनके प्राचीन ग्रन्थों में उस पुराने सुमेरु निवास का गन्ध मिलता है।* परन्तु बिना पक्षपात से जब हम इस विषय पर विचार करते हैं तब हमें मालूम होता है कि इस मत के लिये कोई प्रमाण नहीं है। तिलक महाशय ने अवश्य ही बहुत से प्रमाण का उद्धार किया है परन्तु वे सब प्रमाण न होकर प्रमाणाभास हैं। वेद के वचनों से अपने अनुकूल अर्थ करने के लिये आप ने बड़ी खींचातानी की है, उनकी व्याख्या में तो सब से बड़ा दोष यह है कि व्याख्या करने के समय उपक्रम और उपसंहार के ऊपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया गया। ऋक्संहिता प्रभृति से जिन अंशों का उद्धार करके तिलक महाशय ने सुमेरु निवास की पूर्व स्मृति सिद्ध करने का प्रयत्न किया है उनका अर्थ वैसा नहीं है। वैदिक साहित्य भर में केवल तैत्तिरीय आरण्यक में मेरु का ज्ञान पाया जाता है और यह तैत्तिरीय आरण्यक बहुत ही अर्वाचीन ग्रन्थ है। † वैसे पार्सी धर्म ग्रन्थ आवेस्ता के जिस भाग में ("वेन्दिदाद") मेरु के विषय कथन है वह भी आवेस्ता का सब से अर्वाचीन भाग है। ‡ ऐसे अर्वाचीन ग्रन्थों के प्रमाण से चलना और पुराणों के आधार पर वेद का अर्थ करना एक ही समान हैं। पुराणों में तो सुमेरु का ज्ञान अति स्पष्ट है। परन्तु इस से तो यह सिद्ध नहीं होता है कि वेद के पूर्व काल में आर्य लोग सुमेरु में रहते थे और वेद में सुमेरु निवास की

* B. G. Tilak, *Arctic Home in the Vedas.*

† तैत्तिरीय आरण्यक स्मृति तक का नाम लेता है, "स्मृतिः प्रत्यक्षमैतिह्यमनुमानश्चतुष्टयम्। एतैरादित्यमण्डलं सर्वैरेव विधास्यते॥" (१।२।१)। यह आरण्यक की भाषा भी बहुत अर्वाचीन है।

‡ वेन्दिदाद का काल लगभग ख्रीष्ट पूर्व द्वितीय या तृतीय शताब्दी के इधर ही है।

छाया है। इसी रूप से जर्मन पण्डित हिलब्रान्त * या ब्रुनहोफ़र † का यह दिखाने का प्रयत्न कि ऋग्वेद के कुछ अंश भारतवर्ष के बाहर ईराण या मध्य एशिया में रचे गए, सर्वथा निष्फल है। वेद में तिब्बत मङ्गोलिया, चीन-देश प्रभृति के उल्लेख हैं; यह दिखाने के लिये पण्डित उमेश चन्द्र विद्यारत्न का प्रयत्न ‡ भी विफल हुआ है। डाक्टर अविनाश चन्द्र दास ने ऋग्वेद के समय पञ्जाब की जैसी भौगोलिक परिस्थिति समझी है वह भी सर्वथा निराधार है §।

पृथ्वी में सब से स्थिर वस्तु पर्वत है। नदी प्रभृति बदल जाती है परन्तु पर्वत बदलता नहीं ¶। संस्कृत में पर्वत को भूधर (अर्थात् पृथ्वी को धारण करने वाला) भी कहते हैं। इस "पर्वत" या गिरि का और अलग अलग पहाड़ों के नाम वेद में कई बार आये हैं। कहीं तो बादलों को रूपक के द्वारा पर्वत करके व्यपदेश किया गया है। वेदाङ्ग निघण्टु (१।१०) में तो पर्वत और गिरि शब्द साक्षात् मेघ के पर्याय रूप से दिये हैं। क्षितिज में मेघ कुछ पर्वत सा दीखता है। इस से वैदिक कवियों को मेघ-पर्वत-रूपक की सामग्री मिल गई। पुराण की तरह कृष्ण यजुर्वेद की काठक संहिता (३६।७) और मैत्रायणीय संहिता (१।१०।१३) में यह आख्यायिका है कि पूर्व काल में पर्वतों के पक्ष थे, उनके बल से वे उड़ कर जहाँ इच्छा होती थी वहीं उतरते थे इससे पृथ्वी बहुत ढीली रही; इन्द्र ने उन पक्षों को काट दिये और पृथ्वी को दृढ़ किया। यह आख्यायिका वार्षिक इन्द्र-वृत्र-युद्ध (= वर्षा) के रूपक से बनी हुई कवि कल्पना मात्र है, भूगोल के अज्ञान से उत्पन्न नहीं मालूम होता है। अस्तु इन रूपकों से यह बात सिद्ध होती है कि वैदिक आर्य लोग पर्वत से परिचित थे और पर्वत से उनका प्रेम भी था। पर्वतों से नदीयों की उत्पत्ति के उल्लेख कई जगह पर आये हैं। पर्वतों में रहने वाले भयंकर जानवरों (सिंह ?) का भी उल्लेख है। परन्तु पर्वत विशेष के नाम वेद में बहुत ही कम हैं। "हिमालय" नाम नहीं है परन्तु "हिमवत्" शब्द है। यह भी कई जगह पर पर्वत सामान्य

* Alfred Hillebrandt, *Vedische Mythologie.*

† Hermann Brunnhofer, *Urgeschichte der Arier in Vorder-und Central Aasien.*

‡ ऋग्वेदभाष्योपोद्घातप्रकरणम्। Rigveda Samhita, part I.

§ Rigvedic India। आप के मत से उस समय राजपूताना एक बड़ा भारी समुद्र था और सरस्वती नदी उस समुद्र में आकर गिरती थी। इनके मत का खण्डन मैंने Calcutta Review, May, 1922, पृष्ठ ३१७–३२२ में संक्षेप से किया है।

¶ देखिये उत्तररामचरित २।२७ "पहिले जहाँ नदीयों का सोता था वहाँ इस समय बालू है जहाँ वृक्ष घने थे इस समय कम हो गए, जहाँ कम थे अब घने हो गए। बहुत दिन के बाद देखा हुआ बन 'वही है' यह पर्वतों के अवस्थान से हम दृढ़ रूप से जान सकते हैं।"

के अर्थ में आया है, परन्तु कई स्थान पर अवश्य ही हिमालय पर्वतश्रेणी के अर्थ में आया है। खेद की बात यह है कि हिमवत् पर्वत का विस्तार वैदिक आर्य लोग कहाँ से कहाँ तक समझते थे यह जानने के लिये कोई उपाय नहीं है। वेद में और एक पर्वत का नाम आया है, मूजवत्। मूजवत् शब्द एक जाति के अर्थ में भी आया है। मूजवत् शब्द का पर्वत अर्थ करने के लिये हमारे लिये प्रमाण हैं यास्क। ऋक्संहिता १०।३४।१ में सोम को मौजवत (=मूजवत् वाला) कहा गया है। निरुक्त ९।८ में इस मन्त्र की व्याख्या करते समय यास्क ने कहा है कि मौजवत का अर्थ है मूजवत् पर्वत में जात। इस पर्वत से वहाँ के निवासियों का नाम मूजवत् हुआ होगा। मूजवत् पर्वत कहाँ था यह जानने के लिये कोई उपाय नहीं है। परन्तु अथर्ववेद संहिता ५।२२ तैत्तिरीय संहिता १।८।६।२ प्रभृति के कथन से यह हम अनुमान कर सकते हैं कि मूजवत् गान्धार या बाल्हीक देश की ओर उत्तराखण्ड में कहीं दूर देश पर था। हिमालय में एक त्रिककुद् या त्रिककुभ् नाम के त्रिकूट पर्वत का कई जगह पर उल्लेख आया है। वहाँ से एक ख़ास अंजन आता था। शतपथ ब्राह्मण १।८।१।६ में कहा गया है कि महा-ओघ (Flood) के हट जाने पर मनु की नाव उत्तर गिरि (=हिमालय ?) की जिस जगह पर उतरी वह 'मनोरवसर्पण' (मनु का उतार) नाम से प्रसिद्ध है। इसकी परिस्थिति हमें मालूम नहीं है। तैत्तिरीय आरण्यक १।३१ में हम और तीन पर्वतों के नाम पाते हैं, सुदर्शन, क्रौञ्च और मैनाग। इनमें से क्रौञ्च और मैनाग (मैनाक इस आकार से) के नाम पुराण में पाये जाते हैं। सुदर्शन कौन पर्वत है यह स्पष्ट नहीं है। परन्तु परवर्ती साहित्य में जब सुदर्शन मेरु के पर्याय रूप से आता है, यह असम्भव नहीं है कि यहाँ सुदर्शन का अर्थ मेरु ही है। यह तैत्तिरीय आरण्यक बहुत ही अर्वाचीन ग्रन्थ है, इसमें पुराण से या परवर्ती संस्कृत साहित्य के प्रयोग से मेल खाना कुछ असम्भव नहीं है। तै० आ० १।३१ में कहा गया है कि इन तीन पर्वतों में वैश्रवण (कुबेर या कुबेरपुत्र) का नगर है। तैत्तिरीय आरण्यक १।७ में महामेरु का नाम स्पष्ट रूप से लिया गया है, और यह कहा गया है कि कश्यप नाम का अष्टम सूर्य उस पर्वत्त को छोड़ता नहीं है, उसके चारों ओर घूमता है। इससे सिद्ध होता है कि इस महामेरु से सुमेरु (North Pole) को समझना चाहिये।

देशों की सीमा निर्देश के लिये पर्वत की तरह समुद्र भी बड़ा उपयोगी है। वेद में समुद्र का नाम कई जगह पर आया है। यद्यपि वैदिक युग में आर्य लोग समुद्र के तट पर नहीं रहते थे, तथापि साक्षात् या परम्परा से समुद्र का ज्ञान इन लोगों को था। नदियों के समुद्र में पहुँचने का उल्लेख ऋक्संहिता १।७१।७, १।१६३।१, १।१९०।७, ३।३६।७, ३।४६।४, ४।२१।३, ५।५५।५, ५।८५।६, ६।३६।३, ७।४९।२, ७।९५।२, ८।४४।२५, ९।८८।६ और ९।१०८।१६ में है। ऋक्संहिता १।४७।६, अथर्वसंहिता १९।३८।२ में समुद्र जात वस्तुओं का और अथर्वसंहिता ४।१० में समुद्र में उत्पन्न मुक्ता ("शङ्ख कृशन") का उल्लेख है। कहीं

कहीं आकाश को समुद्र रूप से कल्पना की गई है और नीचे का और ऊपर का ये दो समुद्र का उल्लेख है (यथा, ऋ० सं० ७।६।७, १०।९८।५, अ० सं० ११।५।६ ?)। तुग्र के पुत्र भुज्यु के विषय में एक आख्यायिका ऋक्संहिता की कई जगह पर आई है (१।११२।६,१० इत्यादि), जिससे विदित होता है कि समुद्र यात्रा में भुज्यु बड़ी विपत्ति में पड़ा और अश्विकुमारों ने उसे बचा कर किनारे पर पहुँचाया। कोई ख़ास समुद्र का नाम वेद में नहीं मिलता है। केवल ऋक्संहिता १०।१३६।५, शतपथ ब्राह्मण ११६।३।११ प्रभृति कुछ अल्प स्थलों में पूर्व और पश्चिम इन दो समुद्रों का उल्लेख आया है। यह उल्लेख बहुत ही अस्पष्ट है।

परन्तु नदियों के विषय में वेद में बहुत कुछ सामग्री हमें मिल जाती है। "सिन्धु" शब्द परवर्ती काल के संस्कृत में समुद्र के अर्थ में आया है, किन्तु ऋग्वेद संहिता में इसका अर्थ है "नदी" या एक ख़ास नदी—सिन्धु नद या Indus। नदी के लिये वेद में और कई शब्द आये हैं, यथा "नदी" "स्रवत्" इत्यादि। ऋक्संहिता एवं और वेदों में जिस रूप से नदियों का उल्लेख आया है उससे हमें विदित होता है कि वैदिक आर्य लोग नदी के बड़े भक्त थे और उनकी आबादी नदियों के तट पर बसी हुई थी। इस नदीमातृक देश के निवासियों के लिये यह बहुत ही उचित बात है। वेदों में, ख़ास ऋक्संहिता में, बहुत सी नदियों के नाम आये हैं। उनमें से कुछ नाम तो आज तक वैसे ही हैं और कुछ में परिवर्त्तन हो गया है। परन्तु जिन नदियों के वेद में आजकल की तरह नाम हैं उनमें से कुछ तो अवश्य ही आजकल उन नामों से प्रसिद्ध नदियों से भिन्न थीं। आर्य लोग ज्यों ज्यों आगे बढ़े त्यों त्यों उनको नई नई नदियाँ और नए नए देश मिले। औपनिवेशिकों में प्रायः यह प्रवृत्ति होती है कि वे नये स्थान में पुराने देश के नाम का उपयोग करते हैं। जैसे कि अंग्रेज़ों ने अमरीका देश में इंलैण्ड के यार्क (York) शहर के अनुसार एक शहर का नाम रक्खा न्यू यार्क (New York), अस्ट्रेलिया में वेल्स (Wales) के अनुकरण से एक देश का नाम रक्खा न्यू साउथ वेल्स (New South Wales), जैसे इंगलैण्ड के केम्ब्रिज (Cambridge) की नकल में अमरीका देश के मेसाचूसेटस (Massachussets) प्रदेश में शहर है केम्ब्रिज (Cambridge), जैसे कि हमारे मथुरा या मथुरा शहर की नकल में दक्षिण में है मदुरा, पञ्जाब की इरावती (रावि) नदी के अनुकरण में ब्रह्मदेश में एक नदी का नाम हुआ 'इरावदी' जैसे कि अङ्ग देश की चम्पा के अनुकरण से बृहत्तर भारत में हिन्दू औपनिवेशिकों ने अन्नाम देश का नाम रक्खा 'चम्पा'। इस प्रकार से वेद में आधुनिक सरस्वती, सरयू, गोमती और यमुना से भिन्न सरस्वती, सरयू, गोमती और युमना नदी पाई जाती हैं। मैं आगे इस का विस्तार करूँगा।

नदियों के विषय में मैं एक बात पहिले ही कह देना चाहता हूँ। लोग प्राचीन समय का नक्शा खींचते वक्त नदियों की स्थिति इस समय की तरह समझ लेते हैं।

परन्तु यह समझना बहुत ही भ्रमपूर्ण है। नदियों की धारा अकसर बदलती रहती है। मध्य एशिया की वक्षु (Oxus) नदी इस समय अरल (Aral) सागर में पहुँचती है, परन्तु ग्रीक भौगोलिक स्त्राबो (ख्री० पू० प्रथम शताब्दी) के समय में काश्यप (कास्पियन Caspian) सागर में पहुँचती थी।* अरब लोगों ने जब पहिले पहल हिन्दुस्तान में चढ़ाई की उस समय पञ्जाब के दक्षिण में एक बड़ी भारी नदी थी, जिसका नाम था हकरा या वाहिन्दा। इस समय वह नदी बिल्कुल सूख गई है; उसका पुराना मार्ग अभी तक नज़र आता है।† पंजाब की नदियों की धारा में और कई परिवर्तन हो गए। वर्तमान काल में भी भारत की नदियों की धारा प्रायः बदलती हुई दीखती है। हमारे प्रयाग के सामने गङ्गाजी की परिस्थिति हर साल कुछ न कुछ बदलती रहती है। मेरे श्रीमान् गुरु जी महामहोपाध्याय डाक्टर गङ्गानाथ झा जी से मालूम हुआ कि उनके देश (दरभङ्गा) में एक कमला नाम की नदी है जो कि इसी साल में कमला नाम की दूसरी एक नदी से मिल गई है, जिससे इसका पहिले कोई सम्बन्ध नहीं था। सिन्ध के "मोएनजो दड़ो" में जो प्राचीन सभ्यता के भग्नावशेष मिले हैं उनका ध्यान से निरीक्षण करने से पता चला है कि सिन्धु नद उस समय शहर के किनारे ही पर था, परन्तु इस समय सिन्धु कई मील दूर को हट गया है ‡। सब देशों की जलवायु धीरे धीरे बदल जाती है। इससे वर्षा में परिवर्त्तन होता है और इस कारण से भी नदियों की धारा बदल जाती है §। इन कारणों से वेद के समय कौन नदी कहाँ से बहती थी यह हम स्पष्ट रूप से नहीं जान सकते हैं।

सम्पूर्ण वैदिक साहित्य के भीतर ऋग्वेद संहिता में सबसे अधिक नदियों के नाम आते हैं। परन्तु "सब नदियाँ" इस अर्थ में ऋक्संहिता में "सप्त सिन्धवः" या "सप्त स्त्रवतः" या ऐसे शब्द आये हैं, जिनका अर्थ है "सात नदियाँ"। ¶

---

* MacCrindle, Ancient India as described by Classical Writers, pp 96-99

† देखिये H. G. Raverty, The Mihran of Sind and its Tributaries (J. A. S. B. 1892 पृष्ठ १५५-५०८)। इस में कई नक्शे हैं, जिन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

‡ देखिये Mohenjodaro and the Indus Civilization, Vol. I, chapter 1 और नक्शा।

§ Ellsworth Huntington की Pulse of Asia और Civilization and Climate देखिये। नदियों की धारा में परिवर्तन होने में और भी कारण होते हैं।

¶ 'सिन्धु' शब्द का अर्थ यहाँ नदी है, समुद्र नहीं। ऋक्संहिता के केवल ५।११।५ और शायद ८।२५।१४ में 'सिन्धु' का अर्थ समुद्र है। अन्यत्र जहाँ जहाँ यह शब्द ऋक्संहिता में आया है वहाँ अर्थ है नदी या सिन्धु नद। पुराणों के युग में सिन्धु शब्द का समुद्र अर्थ अधिक प्रचलित होने से "सात सिन्धु"

परन्तु नदियों की संख्या वास्तव में सात से कहीं अधिक है। लोग समझते हैं कि "सात" प्रधान प्रधान नदियों की संख्या है, परन्तु सात प्रधान नदी कौन हैं इसमें इतना मतभेद है कि हमें कोई व्यवस्था नहीं दीखती है। सायण तो सप्त का अर्थ जब "सात" समझते हैं तब "गङ्गादि सात नदियाँ" ऐसा अर्थ करते हैं। गङ्गादि सात नदी से सायण गङ्गा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु और काबेरी को समझते होंगे*। परन्तु गोदावरी, नर्मदा और काबेरी इन दक्षिण की नदियों के नाम ऋक्संहिता में कहीं भी नहीं आये हैं और गङ्गा का नाम केवल एक बार आया है। इस कारण से "सात नदियाँ" ये सात नदी नहीं हो सकती हैं। पंजाब की पाँच नदी और पूरब की सरस्वती और पश्चिम की सिन्धु, इन नदियों से भी संख्या पूरी नहीं की जा सकती है कारण यह है कि पंजाब में और भी नदियाँ हैं जिनका उल्लेख ऋषियों ने किया है और सिन्धु के पश्चिम की सहायक नदियों के नाम कई बार आये हैं, उनको छोड़ने का हमें क्या अधिकार है ? अतएव "सात नदियाँ" यह हमारे लिये एक बड़ी भारी समस्या है। शायद आर्य लोग पहिले जहाँ रहते थे वहाँ सात ही नदियाँ थीं इस कारण से "सब नदी" के अर्थ में इन लोगों को "सात नदी" कहने की आदत पड़ गई होगी।

वेद में इन नदियों के नाम आये हैं—अनितभा, असिक्नी, आपया, आर्जीकीया, कुभा, क्रुमु, गङ्गा, गोमती, त्रिष्टामा, दृषद्वती, परुष्णी, मरुद्वृधा, मेहत्नू, यमुना, यव्यावती, रथस्या, रसा, वरणावती, वितस्ता, विपाश्, विबाली, शुतुद्री, श्वेत्या, सदानीरा, सरयू, सरस्वती, सिन्धु, सुदामा, सुवास्तु, सुषोमा और सुसर्तु। इनके अतिरिक्त और तीन नाम आये हैं, शिफा और हरियूपीया, वे कुछ लोगों के मत से नदी के नाम हैं, परन्तु इस विषय में हम निःसंशय नहीं हो सकते हैं। शतपथ ब्राह्मण में दो जगह पर (१२।८।१।१७ और १२।९।३।१) एक मनुष्य का नाम आया है, "रेवोत्तर", जिसका अर्थ जर्मन पण्डित वेबरने "रेवा के उत्तर तट पर रहने वाला" ऐसा समझा है। उसके मत से यहाँ हम रेवा या नर्मदा नदी का नाम पाते हैं। असिक्नी, कुभा, क्रुमु, गङ्गा, गोमती, परुष्णी, मरुद्वृधा, बितस्ता, विपाश्, शुतुद्री, सरस्वती, सिन्धु, सुवास्तु और सुषोमा कौन नदियाँ हैं इस विषय में हम निःसंशय हैं, यव्यावती, रथस्या वरणावती, विबाली, और सुदामा कौन नदी हैं यह हम जान नहीं सकते हैं और अनितभा, आपया, आर्जीकीया, त्रिष्टामा, दृषद्वती, मेहत्नू, ऋक्संहिता १०।७५।५ भिन्न अन्यस्थान में आई हुई यमुना, रसा, श्वेत्या, सदानीरा, सरयू और सुसर्तु के विषय में कुछ सन्देह हैं। नीचे इनके विषय में विशेष विवरण दिया जा रहा है। नदियों में सरस्वती का नाम

(="सात नदियाँ") "सात समुद्र" यह अर्थ पाया। पौराणिक भूगोल में सात समुद्रों की कल्पना का मूल यही वैदिक शब्द के अर्थ समझने का भ्रम है।

*देखिये जलशुद्धि का मन्त्र, गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

सबसे अधिक आता है। ऋक्संहिता के १०म मण्डल का ७५ वाँ सूक्त नदी स्तुति नाम से प्रसिद्ध है। इसमें सिन्धु के तट पर रहनेवाला कोई प्रैयमेध ने सिन्धु और उसकी सहायक नदियों की स्तुति की है। यहाँ एक स्थान पर बहुत सी नदियों के नाम पाये जाते हैं। उसकी पाँचवी ऋचा में सिन्धु की पूर्वतट वाली सहायक नदियों के नाम क्रम से दिये हुए हैं और छठी में पश्चिम तटवाली सहायक नदियों के और सिन्धु का नाम है।

अनितभा—ऋक्संहिता ५।५३।९, यह सिन्धु के पश्चिम की कोई (सहायक नदी) होगी।

असिक्नी—ऋ० सं० ८।२०।२५,१०।७५।५ में आया है। यास्क के निरुक्त (९।२६) से विदित होता है कि यह चन्द्रभागा या वर्तमान चीनाव है। ग्रीक लोग इस नदी को अक्षर विपर्यास करके "अकेसिनेस्" नाम से जानते थे।

आपया—केवल ऋक्संहिता ३।२३।४ में आया है। इसके साथ सरस्वती और दृषद्वती के भी नाम आये हैं। अतः यह सरस्वती के साथ मिली हुई या उसके समीप की कोई नदी होगी। महाभारत (३।८३।६८) में उल्लेख है कि आपया कुरुक्षेत्र की एक नदी है।

आर्जीकीया—ऋ० सं० १०।७५।५ में वितस्ता और सुषोमा के बीच में सिन्धु की एक पूरबी सहायक नदी के रूप से इसका नाम आया है। वर्तमान काल की कौन नदी से इसका मिलान करना चाहिये यह निर्णय नहीं किया जा सकता है। यास्क के मत से (निरुक्त ९।२६) आर्जीकीया विपाश्=व्यास नदी है। परन्तु ऋ० सं० १०।७५।५ का क्रम इसका विरोध करता है।

कुभा—ऋ० सं० ५।५३।९, १०।७५।६। सिन्धु की एक पश्चिम वाली सहायक नदी—ग्रीकों की "कोफेन", वर्तमान "काबुल" नदी।

क्रुमु—ऋ० सं० ५।५३।९, १०।७५।६। यह भी वैसी एक नदी है—वर्तमान कुर्रम।

गङ्गा—ऋक्संहिता में केवल १०।७५।५ पर आया है। कुछ लोगों का विचार है कि ऋ० सं० ६।४५।३१ का "उरुकक्षो न गाङ्ग्यः" में गङ्गा के तट पर रहनेवाला उरुकक्ष नाम का पुरुष या गङ्गा के तट पर कोई विशाल वन, जो अर्थ हम समझें गङ्गा नदी का नाम यहाँ आता है। परन्तु इस स्थान में गङ्गा किसी नदी का नाम न होकर किसी स्त्री का नाम भी हो सकता है। अस्तु, ऋ० सं० १०।७५।५ में अवश्य प्रसिद्ध गङ्गा नदी का नाम लिया गया है। यह सूक्त ऋग्वेद का बहुत अर्वाचीन भाग का है। आर्य लोगों को गङ्गा से परिचय बहुत बाद को हुआ था। शतपथ ब्राह्मण १३।५।४।११, जैमिनीय ब्राह्मण ३।१८३, व तैत्तिरीय आरण्यक २।१० में भी गङ्गा का नाम आया है।

गोमती—ऋ० सं० ८।२४।३० व १०।७५।६। ऋ० सं० १०।७५।६ से स्पष्ट विदित होता है कि यह सिन्धु की एक पश्चिमी सहायक नदी है—अफ़ग़ा-

निस्तान देश की वर्तमान गोमाल नदी। ऋ० सं० ८।२४।३० में भी यही नदी होगी, मध्यदेश की गुमती नहीं।

त्रिष्टामा—ऋ० सं १०।७५।६ सिन्धु की कोई पश्चिमी सहायक नदी होगी।

दृषद्वती—ऋ० सं० ३।२३।४, ताण्ड्य महाब्राह्मण २५।१०।१४,१५ व २५।१३।२,४। सरस्वती के दक्षिण में यह नदी है और सरस्वती से मिल जाती है। मनु जी के मत से सरस्वती और दृषद्वती के बीच का देश है ब्रह्मावर्त्त।

परुष्णी—ऋ० सं० ४।२२।२, ५।५२।९,७।१८।८,९, ८।७४।१५ व १०।७५।५। निरुक्त ९।२६। से और ऋ० सं० १०।७५।५ में दिया हुआ क्रम से हमें मालूम होता है कि परुष्णी है इरावती, अर्थात् वर्त्तमान रावी। ऋ० सं० ५।५३।९ का पुरिषिणी शब्द कदाचित् परुष्णी के लिये आया होगा;* या तो यह शब्द सरयू के लिये विशेषण है।

मरुद्‌वृधा—ऋ० सं० १०।७५।५ में असिक्नी (=चीनाब) और वितस्ता (=झेलम) के बीच में आती है। सर अरल स्टाइन के मत से यह वर्तमान काल में मरुवर्द्‌वन नाम की चीनाब की एक पश्चिम वाली सहायक नदी है†।

मेहत्नू—ऋ० सं० १०।७५।६। सिन्धु की कोई पश्चिमी सहायक नदी होगी।

यमुना—ऋ० सं० ५।५२।१७, ७।१८।१९, १०।७५।५, अथर्व संहिता ४।९।१०, ऐतरेय ब्राह्मण ८।२३, शतपथ ब्राह्मण १३।५।४।११, ताण्ड्य महा ब्राह्मण ९।४।१०, २५।१०।२३, २५।१३।४, जैमिनीय ब्राह्मण ३।२८३, आपस्तम्बीय एकाग्निकाण्ड २।११।१२। ऋ० सं० ५।५२।१७ वा ७।१८।१९ में यह परुष्णी=रावी के पास की कोई नदी सी मालूम होती है। अध्यापक हप्‌किन्‌स् के मत से यह परुष्णी से अभिन्न है। मेरा अनुमान यह है कि इन दो स्थान में "यमुना" असिक्नी=झेलम का दूसरा नाम है‡। ऋक् संहिता १०।७५।५ और अथर्व संहिता प्रभृति में यह अवश्य वर्तमान यमुना ही है।

यव्यावती—ऋ० सं० ६।२७।६, ता० म० ब्रा० २५।७।२। यह कोई अज्ञात नदी है। सम्भव है कि यह पंजाब की कोई नदी है।

रथस्पा—जैमिनीय ब्राह्मण ३।२३५ में कोई अज्ञात नदी है।

रसा—ऋ० सं० १।११२।१२, ५।५३।९, १०।७५।६ (और ५।४१।१५, १०।१०८।१,२) जैमिनीय ब्राह्मण २।४४०। ऋ० सं० ५।५३।९ व १०।७५।६ से

---

* देखिये मेरा लेख "*The Identification of the Rigvedic River Sarasvati and some Connected Problems*" (Calcutta University Journal of the Department of Letters Vol. XV.); पृष्ठ ४८।

† Sir M. Aurel Stein, *On Some River Names in the Rigveda* (Bahndarkar Commemoration Volume). पृष्ठ २२-२५।

‡ देखिए मेरा लेख "Identification of Sarasvati", पृ० ४५-४८।

विदित होता है कि यह सिन्धु के पश्चिम तट की कोई सहायक नदी है। पार्सीयों के धर्म ग्रन्थ आवेस्ता में रसा नदी का नाम "रंहा" इस रूप से पाया जाता है। परन्तु ऋ० सं० ५।४१।१५ में यह कोई (नदियों का अभिमानी) देवता है और १०। १०८।१,२ में पृथिवी के अन्त में वर्तमान कोई काल्पनिक (mythical) नदी है।

वरणावती—अथर्व संहिता ४।७।१ में कोई अज्ञात नदी। सायण के मत से यह एक औषधि का नाम है। कुछ लोगों के मत से यह काशी जी के पास की वरणा नदी है।

वितस्ता—ऋ० सं० १०।७५।५। यास्क ने (९।२६) इसका कोई स्पष्ट परिचय नहीं दिया है। परन्तु उल्लेख के क्रम से विदित होता है कि यह वर्तमान झेलम नदी है। यह नदी कश्मीर में अभी तक व्यथ नाम से प्रसिद्ध है। ग्रीक लोग इसे हीदास्पेस करके जानते थे।

विपाश्—ऋ० सं० ३।३३।१,३, ४।३०।११, गोपथ ब्राह्मण १।२।७। वर्तमान व्यास नदी है। यह नदी अरब अभियान के समय स्वतन्त्र धारा से हक्रा पहुँचती थी।

विबाली—ऋ० सं० ४।३०।१२, यह कोई अज्ञात नदी है।

शुतुद्री—ऋ० सं० ३।३३।१, रामायण प्रभृति की शतद्रु और वर्तमान सतलज। अरब आक्रमण के समय यह नदी व्यास से न मिलकर सीधा हकरा को जाती थी।

श्वेत्या—ऋ० सं० १०।७५।६, सिन्धु की कोई पश्चिमी सहायक नदी।

सदानीरा—शतपथ ब्राह्मण १।४।१।१४ इत्यादि। शतपथ ब्राह्मण के कथन से विदित होता है कि उस समय यह नदी कोशल राष्ट्र और विदेह राष्ट्र की सीमाना थी। वर्तमान कौन नदी समझना चाहिये यह स्पष्ट नहीं ज्ञात होता है। बाद के कोशकारों के मत से सदानीरा और करतोया एक ही है। करतोया तो उत्तर बङ्ग की एक नदी है और विदेह देश के पूर्व में है, पश्चिम में नहीं। इस कारण से सदानीरा करतोया न होगी। जर्मन पण्डित वेबर के मत से यह गण्डकी है।

सरयू—ऋ० सं० ४।३०।१८, ५।५३।९ व १०।६४।९, यह नदी कौन सी थी यह जानना कठिन है। १०।६४।९ में इसका नाम सरस्वती और सिन्धु के साथ आया है। परन्तु ऋ० सं० ५।५३।९ में रसा, (अनितभा), कुभा, क्रुमु और सिन्धु इन पश्चिमी नदियों के साथ आने से यह कोई पश्चिमी नदी सी विदित होती है। आवेस्ता में हम सरयु से अक्षरशः समान हरोयू नदी का नाम पाते हैं जो कि वर्तमान हरीरुद है। ऋक् संहिता की सरयू भी शायद इस हरीरुद से अभिन्न है। अवध की सरयू तो नहीं हो सकती है, कारण उस समय आर्यों का अवध तक पहुँचने का कोई प्रमाण नहीं है और ऋक् संहिता में गङ्गा से पूर्व की कोई नदी का नाम नहीं है।

सरस्वती—ऋ० सं० १।८९।३, ११६३।४९, २।३०।८, २।३२।८, २।४१।१८, ३।२३।४, ३।५३।१३, ५।४२।१२, ५।४३।११, ५।४६।२, ६।५०।१२, ६।५२।६, ६।६१।१-७, १०, ११, १४, ७।९।५, ७।३५।११, ७।३६।६, ७।३९।५, ७।४०।३, ७।९५।१, २, ४-६, ८।९६।१, ३, ८।२१।१७, १८, बालखिल्य ६।४, ९।६७।३२, ९।८१।४, १०।१७,७,९, १०।३०।१२, १०।६४।९, १०।६५।१, १३, १०।७५।५, १०।१३१।५, १०।१४१।५, तैत्तिरीय संहिता ७।२।१।४, अथर्व संहिता ६।३०।१ (तैत्तिरीय ब्राह्मण २।४।८।७, मन्त्र ब्राह्मण २।१।१६), ताण्ड्य महाब्राह्मण २५।१०।१, १६, जैमिनीय ब्राह्मण २।२९७, ३।१२०, ऐतरेय ब्राह्मण २।१९, शाङ्खायन ब्राह्मण १२।३, शतपथ ब्राह्मण १।४।१।१४, इत्यादि । ऋक्-संहिता के सब सूक्त एक समय के नहीं हैं । विद्वानों का यह अभिमत है कि ऋक्-संहिता में विभिन्न युग की रचनायें हैं और उनमें सब से प्राचीन और सब से अर्वाचीन मन्त्रों के काल में बहुत ही अन्तर है । ऋक्संहिता के प्राचीन अंश में (यथा २।३०।८, ५।४३।११, ६।४९।७, ६।५२।६, ६।६१, ७।३६।६, ७।३९।५, ७।९५, ७।९६) "सरस्वती" नदी कुरुक्षेत्र देश की वर्तमान 'सरस्वती' नहीं है, परन्तु सिन्धु नद है*। ऋ० सं० ७।९५।३ और ७।९६।४-६ में सरस्वती के साथ सरस्वान् की स्तुति की गई है । मेरा अनुमान यह है कि सरस्वान् सिन्धु नद ही के दक्षिण भाग का नाम है । सरस्वान् की स्तुति ऋ० सं० १।१६४।५२, व १०।६६।५ पर भी की गई है । परन्तु ऋ० सं० ३।२३।४, १०।६४।९, व १०।७५।५ में और तैत्तिरीय संहिता, ताण्ड्य महाब्राह्मण प्रभृति ब्राह्मण व बाद के साहित्य में नदी वाचक सरस्वती शब्द कुरुक्षेत्र की वर्तमान सरस्वती के लिये आया है । मेरा अनुमान यह है कि विश्वामित्र के साथ शुतुद्री (सतलज) के दक्षिण पार में आये हुए भरतों ने कुरुक्षेत्र की इस नदी को सरस्वती नाम से पुकारा और बाद को इनकी देखी देखा और आर्य्य जातियों ने सरस्वती नाम का प्रयोग वर्त्तमान सरस्वती के लिये किया । तब सिन्धु नद को जो कि सरस्वती और सिन्धु के दोनों नाम से प्रसिद्ध था लोग केवल सिन्धु नाम से कहने लगे । कुरुक्षेत्र की सरस्वती नदी आज-कल पटियाला रियासत में लुप्त हो गई है । पौराणिकों के मत से उसकी धारा ज़मीन के भीतर से आकर प्रयाग में गङ्गा और यमुना के साथ सम्मिलित हुई है । परन्तु यह भ्रान्त मत है । ऋग्वेद के समय यह सरस्वती शायद सिन्धु से सम्मिलित होकर पश्चिम समुद्र को पहुँचती थी । ब्राह्मण युग में कुछ अंश के लिए यह लुप्त होकर पुनः पश्चिम की ओर चलती थी । ताण्ड्य महाब्राह्मण में सरस्वती के विनशन

---

*देखिये मेरा "The Identification of the Rigveda River Sarasvati and some Connected Problems" । आवेस्ता में और प्राचीन इराणी शिलालेख में सिन्धु के पूर्व तट वाला एक प्रान्त के लिये हरह्वइती (=Greek Arachosia) यह नाम आया है । इराणी हरह्वइती और सरस्वती एक ही शब्द है ।

का अर्थात् लुप्त होने के स्थान का और जैमिनीय ब्राह्मण में उसका उपमज्जन का अर्थात् पुनः उपर निकल आने के स्थान का उल्लेख है। जैमिनीय ब्राह्मण में "सरस्वती का शैशव" का अर्थात् जिस जगह पर सरस्वती क्षीण धारा से पहिले पहल बहती है, उसका भी उल्लेख है। ऐतरेय ब्राह्मण प्रभृति से मालूम होता है कि सरस्वती से कुछ दूर पर मरुदेश (desert) था। अध्यापक मॉकदोनेल और कीथ के मत से ऋग्वेद के सर्वत्र सरस्वती शब्द सरस्वती के लिये आया है, सिन्धु के लिये नहीं*। अवश्य देवतावाची सरस्वती शब्द भी वेद में आया है।

सिन्धु—ऋ० सं० १।१२६।१, ५।५३।९, ८।२०।२५, ८।२६।१८, १०।६४।९ व १०।७५।३,७,८,९, अथर्वसंहिता १४।१।४३ (?), १९।३८।२, माध्यन्दिनसंहिता ८।५९।१ (?), जैमिनीय ब्राह्मण ३।८२, ३।२३७। पहिले कहा गया है कि सिन्धु शब्द ऋक्संहिता में नदी सामान्य के लिये और दो स्थान पर समुद्र के लिये आया है। अथर्वसंहिता में भी कई स्थान पर (६।२४।१, ७।४५।१, १२।१।३ इत्यादि) समुद्र या नदी के अर्थ में आया है। एक ख़ास नदी के लिये भी सिन्धु शब्द कई बार आया है। ऊपर उन स्थानों का उल्लेख किया गया। सिन्धु वर्तमान सिन्ध नद है। (प्राचीन इराणी लोग इसे हिन्दू कहते थे और ग्रीक लोग इन्दस्। हिन्दू नाम से वर्तमान हिन्दू और हिन्दुस्तान नाम बने हैं; हिन्दू नदी के पूरब में रहनेवालों के लिये इराणी लोग हिन्दू शब्द प्रयोग करते थे, इससे हम लोग हिन्दू कहलाने लगे। वास्तव में हिन्दू देश का नाम है, धर्म का नहीं। अमरीका देश के लोग इस देश के हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सब के लिये जो हिन्दू शब्द का प्रयोग करते हैं वह ठीक ही है। ग्रीक इन्दस् से इन्दस् और इन्डिया नाम बने हैं।) सिन्धु नद के तट पर बहुत अच्छे घोड़े पाये जाते थे। इससे संस्कृत में अश्व के लिये सैन्धव शब्द आता है, ऋक्संहिता में भी सिन्धु देश के अश्वों का उल्लेख है। नमक के लिये भी सैन्धव शब्द बृहदारण्यक उपनिषद् २।४।१२ और ४।५।१३ में आया है। अथर्वसंहिता १९।३८।२ में सैन्धव गुग्गुलु का नाम आया है।

सुदामा—ताण्ड्य महाब्राह्मण २२।१८।७ में सुदामन नदी के उत्तर तट पर एक यज्ञ का उल्लेख आया है। यह कौन नदी है इसका पता नहीं लग सकता।

सुवास्तु—ऋ० सं० ८।१९।३७, यह सिन्धु की सहायक नदी कुभा की सहायक है। ग्रीकों ने इसे सोआस्तस् कहा है और इसका वर्तमान नाम है स्वात्। यह है अफ़ग़ानिस्तान में।

---

*देखिये Macdonell & Keith's Vedic Index, Vol. II पृ०—४३४-७। इस लेख के लिए मुझे इस पुस्तक से और जर्मन पण्डित Zimmer की Altindisches Leben व Ludwig की Die Mantraliteratur (Rigveda, Bd. III) से बहुत सामग्री मिली है।

सुषोमा—ऋ० सं० १०।७५।५। यह सिन्धु की एक पूरबी सहायक नदी है। मेगास्थिनिस ने इसे सोयानस् (या सोआमस्) कहा है और वर्तमान नाम है सोहान।

सुसर्त्तु—ऋ० सं० १०।७५।६ में होने से यह सिन्धु की कोई पश्चिम वाली सहायक नदी होगी।

पहिले कहा गया है कि कुछ लोगों के मत से और दो नदी के नाम वेद में आये हैं, शिफा और हरियूपीया। ऋ० सं० १।१०४।३ में प्रार्थना की गई है कि असुर कुयव (= दुर्भिक्ष ?) की दोनों स्त्री शिफा की धारा में मारी जायँ। यह शिफा कोई नदी हो सकती है, कोई दूर के समुद्र होना भी असम्भव नहीं है। ऋक् संहिता ६।२७।५ में कहा गया है कि इन्द्र ने हरियूपीया पर अभ्यावर्त्ती चायमान के लिये वृचीवतों को मार डाला था और उसके बाद की ऋचा में कहा गया है कि यह लड़ाई यव्यावती में हुई थी। यव्यावती एक नदी का नाम है यह हम जानते हैं। सम्भव है कि हरियूपीया भी यही यव्यावती का दूसरा नाम है जैसा कि सायणाचार्य ने कहा है। जर्मन पण्डित लुद्विग् के मत से हरियूपीया एक नगरी का नाम है। हिलब्रान्त् के मत से यह अफ़ग़ानिस्तान में कुरुम की सहायक नदी इर्याब या हलिआब है।

वेद साहित्य की नदियों के बारे में जो परिचय ऊपर दिया गया है इससे यह सिद्ध होता है कि ऋक् संहिता के समय में आर्य सभ्यता सम्पूर्ण पंजाब और अफ़ग़ानिस्तान में फैली हुई थी, मध्य देश की ओर नहीं बढ़ी थी। परन्तु ब्राह्मण युग में सरस्वती, यमुना, गङ्गा प्रभृति की ओर आर्य बढ़ आये थे और उनकी सभ्यता का केन्द्र था सरस्वती नदी और कुरुक्षेत्र देश।

पर्वत समुद्र और नदी के अतिरिक्त मरुदेश भी एक प्राकृतिक वस्तु है। सरस्वती के निकट मरुदेश का उल्लेख पहिले किया गया है। ऋ० सं० १।३५।८ में तीन मरुभूमि का उल्लेख आता है। वह ऋचा यह है "अष्टौ व्यख्यत् ककुभः पृथिव्यास्त्री धन्व योजना सप्त सिन्धून्। हिरण्याक्षः सविता देव आगाद्दधद्रत्ना दाशुषे वार्याणि॥" (सुवर्ण की चक्षु वाला सवितृ देवता ने पृथिवी के आठ ऊँची ज़मीन, तीन जलहीन देश, सब समतट भूमि और सात नदियों को अच्छी तरह देखे हैं, अपने पूजकों को अच्छे रत्न देता हुआ वह आया है)। यहाँ ककुभ् शब्द को सायण ने दिशा के अर्थ में लिया है, कारण कि संस्कृत में ककुभ् शब्द दिशा के अर्थ में आता है, परन्तु ऋक्संहिता की भाषा में यह शब्द किसी ऊँची वस्तु—पहाड़ इत्यादि—के अर्थ में पाया जाता है। अतएव इस ऋचा में आठ पहाड़ या पहाड़ी का उल्लेख समझना चाहिये। सायण ने धन्व का अर्थ अन्तरिक्ष अर्थात् लोक का किया है, कारण निघण्टु १।३ में धन्व शब्द अन्तरिक्ष के पर्याय रूप से आया है। परन्तु ऐतरेय ब्राह्मण २।१९ प्रभृति के प्रमाण से स्पष्ट जान पड़ता है कि धन्व शब्द का अर्थ जलहीन देश अर्थात् मरुदेश है। निघण्टु के ऐकपदिक (चतुर्थ

अध्याय के धन्व शब्द का यही अर्थ होगा। ऋ० सं० १।३५।८ में कहे हुए ये तीन मरुदेश कहाँ कहाँ थे यह हम जान नहीं सकते हैं।

प्राकृतिक वस्तु के बाद अब हम देखें मनुष्यकृत देश या नगर के उल्लेख वेद में कैसे आते हैं। वैदिक साहित्य में ख़ास देशों के लिये शब्द बहुत कम आये हैं अधिकतर जाति वाचक शब्द आये हैं जिनसे उन जाति का और उनके रहने के देश का अर्थ एक ही साथ निकलता है। संस्कृत में ऐसे शब्दों को जनपद वाची कहते हैं। ये शब्द बहुवचन में आते हैं। बाद के संस्कृत में भी देश के लिये अधिकतर ऐसे शब्द ही आते हैं। जब कोई जाति एक जगह से हटकर दूसरे स्थान पर चली जाती थी देश का नाम भी उनके साथ नये स्थान को पहुँचता था। इस कारण से अङ्ग, विदेह, काशी प्रभृति बाद के नाम के साथ मिले हुए नाम यद्यपि वेद में आते हैं, हम इस बात का निर्णय नहीं कर सकते हैं कि वेद के समय में वह जातियाँ कहाँ थीं और वे देश कौन से रहे।

वेद में पूर्वादिक देश में रहने वालों के लिये सामान्य रूप से प्राच्य उदीच्य प्रभृति शब्द आये हैं। ऐतरेय ब्राह्मण ८।१४ में ऐन्द्रमहाभिषेक के प्रसङ्ग में प्राच्य प्रभृति देश में राज्याभिषेक का उल्लेख है। वहाँ कहा गया है कि प्राच्यों (पूरब देश में रहने वालों) के राजा का अभिषेक "साम्राज्य" के लिये होता है, दक्षिण देश में सत्वतों के राजा का अभिषेक होता है "भौज्य" के लिये, पश्चिम में नीच्य (तरी में रहने वाले ?) और अपाच्य (पश्चिम के रहने वाले) लोगों के राजा का अभिषेक होता है "स्वाराज्य" के लिए, उत्तर में हिमवत् के उस पार जो उत्तरकुरु और उत्तरमद्र जनपद हैं उनके राजाओं का अभिषेक होता है "वैराज्य" के लिये और "ध्रुव मध्यम दिशा" में जो कुरु पञ्चाल के राजा हैं उनका अभिषेक होता है राज्य के लिये। उदीच्यों के (अर्थात् उत्तर दिशा में रहने वालों के) उल्लेख शतपथ ब्राह्मण ३।२।३।१५, ११।४।१।१, शाङ्खायन ब्राह्मण ७।६, गोपथ ब्राह्मण १।३।६ में भी आता है। इन ब्राह्मणों की उक्ति से हमें ज्ञात होता है कि उदीच्यों की बोली बहुत शुद्ध थी। संस्कृत भाषा के सब से बड़े वैयाकरण पाणिनि उदीच्य ही थे क्योंकि वर्तमान आटक के पास उनका जन्म हुआ था। प्राच्यों का नाम शतपथ ब्रा० १।७।३।८ और १३।८।१।५ व १३।८।२।१ में भी आता है। प्राच्य, उदीच्य प्रभृति के अतिरिक्त, ये (जाति या) जनपद वाची नाम वेद में आते हैं, अङ्ग, अन्ध्र, कम्बोज, काशी, कीकट, कुरु, उत्तर कुरु, कोसल, गन्धारि, चेदि, नैषिध, पञ्चाल, पारावत (?), पुण्ड्र, बल्हीक, बाहीक, भरत, मगध, मत्स्य, मद्र, उत्तर मद्र, महावृष, वङ्ग, विदेह, विदर्भ इत्यादि।

अङ्ग—अ० सं० ५।२२।१४ में गन्धारि और मगधों से और गोपथ ब्राह्मण २।९ में मगधों के साथ इनका नाम आता है। गोपथ के समय तक अङ्ग लोग शायद पश्चिम विहार को पहुँच गये थे।

अन्ध्र—ऐतरेय ब्राह्मण ७।१८ में कहा गया है कि जब विश्वामित्र ने अजीगर्त्त का पुत्र शुनःशेप को पुत्र रूप से ग्रहण किया और उनको अपने पुत्रों में ज्येष्ठ करके स्वीकार किया, तब विश्वामित्र के कुछ पुत्रों ने इस व्यवस्था को स्वीकार नहीं किया। तब ऋषि के शाप से वे लोग आन्ध्र, पुण्ड्र, शबर, पुलिन्द, मूतिब, इन उपान्तवासी दस्युजाति में परिणत हो गए। इससे हम इतना ही जान सकते हैं कि आन्ध्र लोग आर्य निवास के बाहर उपान्त देश में रहते थे। ऐतिहासिक काल में ये लोग दक्षिणापथ के उत्तर भाग में रहते थे और इस समय मन्द्राज प्रान्त के उत्तर भाग आन्ध्र देश कहलाता है।

कम्बोज—वंश ब्राह्मण में कोई मद्रगार नाम के आचार्य का शिष्य काम्बोज औपमन्यव का नाम आता है। इससे यों अनुमान किया जा सकता है मद्र और कम्बोज ये लोग उत्तर देश के (भारतवर्ष के उत्तर पश्चिम के) रहने वाले थे।

काशी या काश्य—शतपथ ब्रा० १३।५।४।१९,२१, (अथर्वसंहिता पैप्पलाद शाखा की ५।२२।१४), जैमिनीय ब्राह्मण २।३२९, बृहदारण्यक उपनिषद् २।१।१, ३।८।२ कौषीतकी उपनिषद् ४।१, गोपथ ब्रा० १।२।९ इत्यादि। ब्राह्मण युग की काशी वर्तमान काशी से अभिन्न यह मानने के लिये कोई प्रमाण नहीं है, यद्यपि कोसलों के और विदेहों के साथ काशियों का नाम आता है। मेरा अनुमान है कि काशी लोग भरतवंश ही की एक शाखा थे, और धीरे-धीरे मध्य देश की पूरबी सीमा तक पहुँच गये थे।

कीकट—ऋ० सं० ३।५३।१४। निरुक्त ६।३२ से और ऋ०. संहिता के शब्दों से पता चलता है कि यह विपाश् और शुतुद्री के दक्षिण पार की कोई अनार्यों की भूमि थी, जहाँ गाय बहुत सी थीं। बाद के कोशकारों के मत से कीकट और मगध पर्यायवाची शब्द हैं, परन्तु ऋक्संहिता का कीकट देश वर्तमान विहार से बहुत दूर पर रहा होगा।

कुरु—कुरुओं के नाम ब्राह्मणों में सर्वत्र आता है। यद्यपि ऋक्संहिता में साक्षात् कुरु नाम नहीं आया है, एक मनुष्य का नाम कुरुश्रवण (१०।३३।४) व पूरु जाति के उल्लेख हैं। कुरु लोग भरतवंशीय अतएव पूरुवंशी थे। मेरा अनुमान है कि कुरु और पूरु (पुराणों में पुरु) एक ही शब्द हैं। ब्राह्मण युग के कुरुओं के देश पुराण के कुरुक्षेत्र से अभिन्न होगा। कुरुओं के साथ प्रायः और एक जाति का नाम आता है, पञ्चाल। ऐतरेय ब्राह्मण से ज्ञात होता है कि हिमवत् (हिमालय) के उत्तर को उत्तरकुरु लोग रहते थे (८।१४) और उनका देश देवक्षेत्र था (८।२३)।

कोसल—शतपथ ब्राह्मण १।४।१।१७, १३।५।४।४, जैमिनीय ब्राह्मण २।३२९, प्रश्नोपनिषद् ६।१। इनके नाम विदेहों के साथ-साथ आता है इस कारण से कोसल और विदेहों के निवास वैदिक युग में भी पास ही पास रहा होगा।

गन्धारि या गन्धार—ऋ० सं० १।१२६।७, अ० सं० ५।२२।१४, छान्दोग्य उपनिषद् ६।१४।१। गन्धारि और पुराण के गान्धार एक ही हैं। गान्धार की तरह गन्धारियों का देश वर्तमान कान्दाहार से अभिन्न होगा। ऋक्संहिता में इस देश के अच्छे पशम वाले भेड़ों का उल्लेख है। छान्दोग्य उपनिषद् की रचना जिस देश पर हुई थी वहाँ से गन्धार देश कुछ दूर पर था ऐसा ज्ञात होता है।

चेदि—चेदिराज कशु के दान की महिमा ऋ० सं० ८।५। ३७-३९ में गायी गई। चेदि राष्ट्र कहाँ था यह हम जान नहीं सकते हैं।

नैषिध—शतपथ ब्रा० २।३।२।१,२ में एक दक्षिण के राजा, नड़ नाम के, नैषिध कहे गए हैं। इससे नैषिधों का निवास दक्षिण में था ऐसा जान पड़ता है। बाद के युग में नैषध देश दक्षिण ही में था।

पञ्चाल—ब्राह्मणों में इनके नाम कई बार आये हैं। कुरुओं के पूरब की ओर ये लोग शायद रहते थे।

पारावत—कुछ लोगों के मत से ऋक्संहिता, ताण्ड्य महाब्राह्मण प्रभृति में आया हुआ यह शब्द एक जाति विशेष के लिये है। परन्तु मैं समझता हूँ कि यह शब्द दूर के रहने वालों के लिये सामान्य रूप से आया है *।

पुण्ड्र—ऐतरेय ब्राह्मण ७।१८ में अन्ध्र इत्यादि के साथ इनका नाम आया है। बाद के साहित्य में पुण्ड्र देश विहार से अभिन्न सा ज्ञात होता है। हम विहार के लिये पौण्ड्रवर्धन नाम बाद को पाते हैं।

बल्हिक—अ० सं० ५।२२।५, ७,९ से ज्ञात होता है कि ये उत्तर के रहने वाले थे। श० ब्रा० १२।९।३ में बल्हिक प्रतीपीय करके एक पुरुष का नाम आता है। बल्हिक और बाद के वाल्हीक (बाल्ख ?) एक ही हैं।

बाहीक—श० ब्रा० १।७।३।८, कोई उत्तर पश्चिम की जाति। बाद को पञ्जाब में बाहीकों की स्थिति का प्रमाण हमें मिलता है।

भरत—ऋक्संहिता से लेकर भरतों का नाम वेद में सर्वत्र आता है। ये भरत लोग पूरुओं से सम्बद्ध थे। वैदिक युग में भरतों का कोई नियत निवास स्थान नहीं था। ऋ० सं० ७।१८ प्रभृति में तृत्सु भरत सुदास् राजा को परुष्णी के तट पर हम पाते हैं और ३।३३ व ३।५३ में विपाश् और शुतुद्री पार करते हुए देखते हैं। ऋ० सं० ३।२३ में दो भारत राजपुत्र को हम सरस्वती, दृषद्वती प्रभृति के पास देखते हैं और जैमिनीय ब्राह्मण ३।२३७ में भरतों को सिन्धु के तट पर पाते हैं। ये भरत लोग आर्यों में सबसे प्रथित थे। उनके नाम से इस देश का नाम बाद को भारतवर्ष हुआ है।

---

* देखिये मेरा लेख "Identification of the Rigvedic River Sarasvati." पृष्ठ ३४-३९।

मगध—अ० सं० ५।२२।१४, वाजसनेय संहिता ३०।५।२२, तैत्तिरीय ब्राह्मण ३।४।१।१ इत्यादि। वैदिक युग में मगध लोग नाना कारण से बद-नाम थे। स्मृतियों के युग में भी यह दशा थी। देखिये—"अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, सुराष्ट्र और मगध देश में तीर्थ यात्रा के सिवाय जाने से फिर से उपनयनादिक संस्कार करके शुद्ध होना पड़ता है" (अङ्गवङ्गकलिङ्गेषु सौराष्ट्रमगधेषु च। तीर्थ-यात्रां विना गच्छन् पुनः संस्कारमर्हति॥)। मगधों का गाना बजाना प्रभृति काम से सम्बन्ध था। माध्यन्दिन संहिता ३०।३२ में वेश्या जुआड़ी प्रभृति के साथ मागध का नाम लिया गया है। वेद के समय मगधों का देश उत्तर विहार ही में था कि उससे कुछ हटकर, यह हम जान नहीं सकते हैं।

मत्स्य—शतपथ ब्राह्मण १३।५।४।९, कौषीतकी उपनिषद् ४।१, गोपथ ब्राह्मण १।२।९। कुछ लोगों के मत से ऋ० सं० ७।१८।६ में इनका नाम आता है, परन्तु यह सत्य नहीं है। वेद के समय में ये लोग कहाँ रहते थे, जयपुर की ओर या अन्यत्र यह दुर्ज्ञेय है।

मद्र—बृहदारण्यक उपनिषद् ३।३।१, ३।७।१।१। पहले कहा गया है कि ऐ० ब्रा० में हिमालय के उत्तर के रहने वाले उत्तर मद्रों का नाम आता है।

महावृष—अ० सं० ५।२२।४,५,८, जैमिनीय ब्राह्मण १।२३४, जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण ३।४०।२, छान्दोग्य उपनिषद् ४।२।५ इत्यादि। कोई उत्तर की ओर दूर में रहने वाली जाति।

वङ्ग—ऐतरेय आरण्यक २।१।१ में वङ्गावगधाः शब्द आता है जो कि वङ्ग-मगधाः के लिये भ्रान्त पाठ सा मालूम होता है। ऐतरेय आरण्यक बहुत अर्वाचीन पुस्तक है, वहाँ मगध के पास में वङ्ग का उल्लेख समुचित ही है।

विदेह—श० ब्रा० १।४।१।१० (विदेघ वा विदेह दोनों आकृति में) बृहदार-ण्यक उपनिषद् की कई जगह पर, कौषीतकी उप० ४।१, ताण्ड्य महा ब्रा० २५। १०।१७ इत्यादि। कोसलों के साथ इनका नाम आता है। ऊपर देखिये।

विदर्भ—केवल जैमिनीय ब्राह्मण २।४४२ में इनका नाम पाते हैं। उस ब्राह्मण के समय ये लोग वर्तमान विदर्भ (बेरार) से कितनी दूरी पर थे यह दुर्ज्ञेय है।

इन जनपद वाची शब्दों के अतिरिक्त और भी कई देश या नगर वाची शब्द वैदिक साहित्य में आये हैं। उनका विवरण मैं नीचे संक्षेप में दे रहा हूँ।

काम्पिल—तैत्तिरीय संहिता ७।४।१९।१, मैत्रायणीय संहिता ३।१२।२०, काठक संहिता आश्वमेधिक ४।८, माध्यन्दिन संहिता २३।१८, तै० ब्राह्मण ३।९।६ श० ब्रा० १३।२।८।३। यह पञ्चाल देश की राजधानी सी मालूम होती है।

कारपचव—ता० म० ब्रा० २५।१०।२३, यमुना के तट पर कोई स्थान।

कारोटी—श० ब्रा० ९।५।२।१५, कोई स्थान या नदी जहाँ (या जिसके तट पर) तुर कावषेय ने अग्निचयन किया था।

कुरुक्षेत्र—कई जगह पर पुण्य भूमि करके इसका नाम आया है।

कौशाम्बी (?)—श० ब्रा० १२।२।२।१३ वा गोपथ ब्रा० १।२।२४ में एक पुरुष का "कौशाम्बेय" करके नाम आया है। हरिस्वामी के मत से इस का अर्थ है "कौशोम्बी में रहने वाला" परन्तु वास्तव में "कुशाम्ब का पुत्र" यही समीचीन अर्थ मालूम होता है (देखिये ता० म० ब्रा० ८।६।८)।

तूर्घ्न—तै० आरण्यक ५।१।१, कुरुक्षेत्र के उत्तर का भाग।

त्रिप्लक्ष—ता० म० ब्रा० २५।१३।४, यमुना के पास का स्थान जहाँ दृषद्वती का अन्तर्धान होता है।

नाडपित्—श० ब्रा० १३।५।४।१३ "शकुन्तला नाडपित्यप्सरा भरतं दधे इत्यादि" में यह सन्दिग्ध है कि द्वितीय और तृतीय शब्द की सन्धि का कैसे छेद होगा। अगर 'नाडपिति+अप्सरा:' ऐसा छेद होगा तो अर्थ यह है कि नाडपित् नाम के कोई स्थान में अप्सरा शकुन्तला ने भरत को प्रसव किया। परन्तु 'नाडपिती+अप्सरा:' ऐसे छेद होगा तो नाडपिती शकुन्तला का विशेषण है और यहाँ किसी देश का नाम नहीं है।

नैमिश या नैमिष—काठक संहिता १०।६, ता० म० ब्रा० २५।६।४, जैमिनीय ब्राह्मण १।३६३, कौषीतकि ब्राह्मण २६।५, २८।४, छान्दोग्य उपनिषद् १।२।१३, यह एक पवित्र स्थान था, जहाँ बड़े बड़े ऋषि लोग रहते थे। इस नैमिष वन में महाभारत का प्रथम प्रचार हुआ था। इसका वर्त्तमान नाम है निमसार।

परीणाह—ता० म० ब्रा० २५।१३।१, जैमिनीय ब्राह्मण २।३०० इत्यादि। कुरुक्षेत्र के पश्चिम में यह स्थान है।

प्लक्ष प्रास्रवण—ता० म० ब्रा० २५।१०।१६,२२ इत्यादि, यह विनशन से ४४ दिन के रास्ते में है।

रैक्कपर्ण—छा० उप० ४।२।५, यह महावृषों के देश में कोई स्थान है।

विनशन—ता० म० ब्रा० २५।१०।१, जै० उप० ब्रा० ४।२६ इत्यादि। यह सरस्वती नदी के अन्तर्धान का स्थान है।

साचीगुण—ऐ० ब्रा० ८।२३ यह भरतों के देश में कोई स्थान सा मालूम होता है।

स्थूलार्म—ता० म० ब्रा० २५।१०।१८ यह कोई स्थान है जिसके उत्तर में कोई हद है। सायण कहता है कि यह सरस्वती का हद है।

इनके अतिरिक्त और भी कई छोटे मोटे या सन्दिग्ध नाम वेद में आते हैं। लेख के बहुत बढ़ जाने से मैंने उनका उल्लेख नहीं किया है। परन्तु अन्त में एक शब्द का नाम मुझे अवश्य ही लेना है जो कि ऋक्संहिता में एक बार (८।२४।२७) पंजाब के लिये आया है—"सप्त सिन्धव:" अर्थात् सात नदियों का देश। वेद में कहीं पञ्चनद शब्द नहीं आया है। आवेस्ता में भी पंजाब या भारतवर्ष के लिये "हफ्त हिन्दव" शब्द आया है॥

योग-भाष्य में भुवन-प्रस्तार

[लेखक—साहित्याचार्य पं० र० मि० शास्त्री, काव्य-वेदान्त-तीर्थ, एम्० ए०, एम्० ओ० एल्०, अध्यापक, संस्कृत-विभाग, प्रयाग-विश्वविद्यालय]

पातञ्जल योगदर्शन में तृतीत विभूतिपाद के अन्तर्गत २५ वाँ (और कहीं कहीं २६ वाँ अथवा २७ वाँ) सूत्र "भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात्" है। योगशास्त्र में "संयम" एक पारिभाषिक शब्द है जिस से एक ही विषय से सम्बन्ध रखने वाले "धारणा" "ध्यान" और "समाधि" तीनों का ग्रहण किया जाता है। शरीर के भीतर के (नाभिचक्र, हृदयकमल, नासिकाग्र, इत्यादि) प्रदेशों अथवा शरीर से बाहर के किसी विषय में वृत्ति (ज्ञान) मात्र के द्वारा चित्त का बंध (सम्बन्ध) "धारणा" कहलाता है। उस प्रदेश वा विषय में प्रतीति की एकाकारता (जिसमें किसी अन्य प्रतीति का संस्पर्श न हो) अर्थात् आलम्बनरूप ध्येय (विषय) की प्रतीति के समान चित्तवृत्ति का निरन्तर प्रवाह "ध्यान" कहलाता है। यही ध्यान जब अपने आकार की प्रतीति से रहित होकर केवल ध्येय के आकार की प्रतीति रूप ही रह जाता है तो "समाधि" कहलाता है। धारणा, ध्यान, समाधि (सम्प्रज्ञात) तीनों ही योग के अन्तरङ्ग साधन हैं और एक शब्द में इन का नाम "संयम" है। यह संयम जब सूर्य के विषय में किया जाता है तब भुवनों का ज्ञान योगी को होता है यह प्रकृत सूत्र का शब्दार्थ है। इस पर वाचस्पति मिश्र ने अपनी व्याख्या में लिखा है कि बुद्धिसत्त्व स्वभाव से ही विश्वप्रकाशन करने में समर्थ है, (परन्तु) तमोमल से आवृत रहता है (तथापि) उसे रजोगुण जिस प्रदेश वा विषय के ऊपर उघाड़ देता है उसी को वह प्रकाशित करने लग जाता है और एवं सूर्यद्वार (सुषुम्ना) के संयम से उघड़ कर भुवन को प्रकाशित करता है। रामानन्द यति ने अपनी मणिप्रभा में लिखा है कि इस संयम से योगी का चित्त दृश्य के साथ अभिन्न होकर १४ भुवनों को साक्षात् करता है। भावागणेश और नागोजीभट्ट ने लिखा है कि सूर्यमण्डल में संयम करने से उसके अन्तर्गत सब बातों का साक्षात्कार होने पर उनसे १४ भुवनों का ज्ञान होता है। नागोजी ने यह भी लिखा है कि इस संयम का उपयोग यह है कि नानाविध लोकगतियों को देख कर अत्यन्त वैराग्य हो जावे। अनन्त पण्डित ने अपनी योगचन्द्रिका टीका में भूः, भुवः, इत्यादि सात

भुवनों का ज्ञान होना लिखा है। भोजराज ने अपनी राजमार्तण्ड नाम वृत्ति में लिखा है कि प्रकाशमय सूर्य में जो संयम करता है उसको भूः, भुवः, स्वः, इत्यादि सात लोकों में जो भुवन अर्थात् विविध सन्निवेश वाले पुर (स्थान) हैं उनके विषय में यथावत् ज्ञान उत्पन्न हो जाता है। इस सूत्र में भौतिक प्रकाश आलम्बन रूप से बतलाया गया है।

परन्तु इस सूत्र का व्याख्यान सांख्यप्रवचन नामक व्यासभाष्य में अत्यन्त विशदरूप से किया गया है। यद्यपि लोकों वा भुवनों के इस व्याख्यान में ऐसी बहुत सी बातें आई हैं जो अद्भुत प्रतीत होती हैं तथापि उन बातों की दृष्टि से यहाँ उसका उद्धृत कर देना आवश्यक प्रतीत होता है जिनसे प्राचीन ज्योतिष शास्त्रियों के अतिरिक्त विद्वानों का लोकों के विषय में परम्पराऽऽगत सत्य रूप साम्प्रदायिक ज्ञान कैसा था इसका आभास मिलता है।

"सूर्य में संयम करने से भुवनों का ज्ञान होता है। उनका प्रस्तार इस प्रकार है। लोक सात हैं। उनमें (१) 'भूः' लोक अवीचि* (नरकविशेष) से आगे और मेरुपृष्ठ (सुमेरु पर्वत के पश्चाद्भाग) तक है। (२) 'अन्तरिक्ष' लोक मेरुपृष्ठ से लेकर ध्रुव-पर्यन्त है जो ग्रह, नक्षत्र, तारा गणों से विचित्र है। (३) उससे आगे तीसरा 'स्वः' लोक (अर्थात्) पाँच प्रकार का महेन्द्र का लोक है। चौथा प्रजापति का 'महः' लोक है। ब्राह्म लोक तीन प्रकार का है। वह इस प्रकार कि (५) 'जन' लोक (६) 'तपो'-लोक (७) 'सत्य' लोक। इस विषय का संग्रह-श्लोक यह है—

ब्राह्मस्त्रिभूमिको लोकः प्राजापत्यस्ततो महान्।
माहेन्द्रश्च स्वरित्युक्तो दिवि तारा भुवि प्रजाः॥

अर्थात् ब्राह्म लोक तीन भूमिकाओं (खण्डों) वाला है (जन, तपः, सत्य) उसके अनन्तर प्राजापत्य 'महत्' लोक है। माहेन्द्र लोक 'स्वः' इस नाम से प्रसिद्ध है। 'द्यु'-लोक में ताराएं हैं। 'भू'-लोक में प्रजाएं हैं।

अवीचि से ऊपर ऊपर स्थित ६ महानरक भूमियाँ—(१) महाकाल (२) अम्बरीष (३) रौरव (४) महारौरव (५) कालसूत्र (६) अन्धतामिश्र—हैं जो (क्रमशः) घन (बादल), सलिल (जल), अनल (अग्नि), अनिल (वायु), आकाश और तमः (अन्धकार) पर स्थित हैं, जहाँ अपने कर्मों से उपार्जित दुःखों का अनुभव करने वाले प्राणी कष्टपूर्ण लम्बी आयु को बिता कर उत्पन्न होते हैं।

तदनन्तर महातल, रसातल, अतल, सुतल, वितल, तलातल, पाताल, नामों

---

* नागार्जुन के नाम से प्रसिद्ध "धर्मसंग्रह" नामक बौद्ध ग्रन्थ में आठ उष्ण नरकों में "अवीचि" अन्तिम है—"संजीवः कालसूत्रः संघातो रौरवो महारौरवस्तपनः प्रतापनोऽवीचिश्चेति।" अमरकोष में नरक-भेद—"तपनावीचिमहारौररौरवाः। संहारः कालसूत्रं चेत्याद्या"—हैं।

वाले सात पाताल* हैं। यह भूमि आठवीं सात द्वीपों वाली और वसुमती (धनधान्य-पूर्ण) है जिसके मध्य में स्वर्णमय पर्वतराज सुमेरु है। उसके शिखर चाँदी, वैदूर्य, स्फटिक स्वर्ण और मणि के हैं। वहाँ वैदूर्य की प्रभा के प्रतिबिम्ब से आकाश का दक्षिण भाग नीलकमल के पत्र जैसा श्याम, पूर्व श्वेत, पश्चिम स्वच्छ और उत्तर कुरण्टक जैसा (अर्थात् पीला) रहता है। और इसके दक्षिण पार्श्व में जम्बू (जामुन का वृक्ष) है जिससे यह जम्बूद्वीप कहलाता है। सूर्य के प्रचार के कारण रात्रि और दिन मानों इसमें लगे हुए हैं।

उसके उत्तर में नीले और श्वेत शिखरों वाले तीन पर्वत हैं जिनकी लम्बाई दो हज़ार है। उनके अन्तों में नौ नौ हज़ार योजन के तीन वर्ष हैं (१) रमणक, (२) हिरण्मय, (३) उत्तर कुरु। दक्षिण में दो हज़ार की लम्बाई वाले निषध, हेमकूट और हेम शैल (ये तीन पर्वत) हैं। इनके अन्तरों में नौ नौ हज़ार योजन के तीन वर्ष हैं (१) हरिवर्ष, (२) किम्पुरुष, (३) भारत। सुमेरु के पूर्व में भद्राश्व वर्ष और माल्यवान् (पर्वत) की सीमाएँ हैं, पश्चिम में केतुमाल (वर्ष) और गन्धमादन (पर्वत) की सीमाएँ हैं, (तथा) मध्य में इलावृत वर्ष है। इस प्रकार यह (समस्त जम्बूद्वीप) सौ हज़ार (अर्थात् एक लाख) योजन का, सुमेरु की प्रत्येक दिशा में उसके आधे (अर्थात् पचास हज़ार योजन) में संस्थित है। अतः यह निश्चय है कि यह जम्बूद्वीप सौ हज़ार की लम्बाई वाला इस से दोगुने तथा वलय (कङ्कण) के आकार वाले लवणोदधि (खारे समुद्र) से घिरा है।

इस से दो दो गुने शाक, कुश, क्रौञ्च, शाल्मल, गोमेध और पुष्कर द्वीप तथा सरसों की ढेरियों जैसे सात समुद्र हैं।

(ये सातों द्वीप) कर्णाभूषण जैसे विचित्र शैलों वाले हैं और इक्षुरस सुरा, घृत, दधि, मण्ड, क्षीर और स्वादूदक (मीठे जल) वाले सात† समुद्रों से घिरे हैं। इनका आकार कङ्कण जैसा है और इन सब के अन्त में लोकालोक पर्वत का घेरा है। इन सब का हिसाब पचास करोड़ योजन है।

इतना सब (अर्थात सातों द्वीप, उनके पर्वतादिक, उनके आस-पास के समुद्र उनको घेरने वाला लोकालोक पर्वत—यह सब भू-मण्डल) सुप्रतिष्ठित संस्थिति से युक्त होकर ब्रह्माण्ड के मध्य में ठहरा हुआ है। और ब्रह्माण्ड प्रकृति का अणु अवयव है जैसे (अनन्त) आकाश में खद्योत (जुगनू)।

---

* बौद्ध ग्रन्थ "धर्मसंग्रह" में—"धरणितलोऽचलो महाचल आपः काञ्चनः संजीवो नरकश्चेति"—ये सात पाताल गिनाए गए हैं।

† बौद्धों के "धर्मसंग्रह" पुस्तक में सप्त सागरों के नाम ये हैं—"क्षारः क्षीरो दध्युदधिर्घृतं मधुः सुरा चेति।" यहाँ हमारे इक्षुरस और मण्ड के स्थान पर क्षार और मधु के नाम हैं।

अब इन लोकों वा भुवनों के निवासी कैसे हैं इसका वर्णन आता है।

इन में से पाताल में, समुद्र में, पर्वतों में—इन में—सुर, गन्धर्व, किन्नर, किम्पुरुष, यक्ष, राक्षस, भूत, प्रेत, पिशाच, अपस्मारक, अप्सरः, ब्रह्मराक्षस, कूष्माण्ड, विनायक (नामक) देव-समूह (जाति) निवास करते हैं। सब द्वीपों में पुण्यात्मा देव—मनुष्य रहते हैं। सुमेरु त्रिदशों (देवों) के उद्यानों की भूमि है। वहाँ मिश्र-वन, नन्दन, चैत्ररथ और सुमानस ये उद्यान हैं, सुधर्मा देवों की सभा (सभा भवन) है, सुदर्शन (उनका) पुर (नगर) है, वैजयन्त महल है।

अब 'भूः' लोक के वर्णन के पश्चात् अब 'अन्तरिक्ष' (भुवः) आदि लोकों का वर्णन आता है।

ग्रह, नक्षत्र और तारकाएँ ध्रुव से सम्बद्ध हैं। इनकी चाल का पता वायु के व्यापार के नियम से लगता है। ये सुमेरु से ऊपर ऊपर स्थित हो कर द्यु-लोक (अन्तरिक्ष) में घूमते हैं।

माहेन्द्र (स्वः) लोक में रहने वाली छः* ही देव जातियाँ हैं—(१) त्रिदश, (२) अग्निष्वात्त, (३) याम, (४) तुषित, (५) अपरिनिर्मितवशवर्ती, और (६) परिनिर्मितवशवर्ती। ये सभी—संकल्प सिद्ध, अणिमादि ऐश्वर्य से युक्त, कल्पभर की आयु वाले, सुन्दर वृन्द वाले, काम-भोग स्वभाव वाले, इच्छानुसार देह धारण करने वाले (औपपादिकदेह)—होते हैं जिनकी उत्तम और अनुकूल अप्सराएँ सेवा-टहल करती हैं।

प्राजापत्य 'महत्' लोक में पाँच प्रकार की देवजातियाँ हैं (१) कुमुद, (२) ऋभु, (३) प्रतर्दन, (४) अञ्जनाभ† और (५) प्रचित्ताभ। महाभूत इन के वश

*"धर्मसंग्रह में छः कामावचर देव ये हैं—"चातुर्महाराजकायिका—स्त्रायस्त्रिंशा - स्तुषिता-यामा निर्माणरतयः परनिर्मितवशवर्तिनश्चेति।" बौद्धों का 'कामावचराः'। शब्द योगभाष्य के "सङ्कल्पसिद्धाः" वा "औपपादिकदेहाः" का पर्याय होने पर भी एक संज्ञा-विशेष का परिचय देता है। योगभाष्य में "त्रिदशाः" और "अग्निष्वात्ताः" ये वैदिककाल के पुराने नाम रक्खे गए हैं उन के स्थान पर धर्मसंग्रह में "त्रायस्त्रिंशाः" और "चातुर्महाराजकायिकाः" ये व्याख्यान रूप नई संज्ञाएँ रक्खी गई हैं। योगभाष्य के अन्तिम दो नामों के स्थान में बौद्धों के "निर्माणरतयः" और "परनिर्मितवशवर्तिनः" अधिक स्पष्टार्थ हैं। और "निर्माणरति" शब्द सांख्य-योग के "निर्माणचित्त" इस पुराने शब्द के समीप भी है।

† धर्मसंग्रह में १८ रूपावचर देव ये हैं—"ब्रह्मकायिका ब्रह्मपुरोहिता ब्रह्मपार्षद्या महाब्राह्मण परीत्ताभा अप्रमाणाभा आभास्वराः परीत्तशुभाः शुभकृत्स्ना अनभ्रकाः पुण्यप्रसवा बृहत्फला असंज्ञिसत्त्वा अबृहा अतपाः सुदृशाः सुदर्शना अकनिष्ठाश्चेति।" इन में से 'परीत्ताभ' और 'अप्रमाणाभ' ही कदाचित् योगभाष्य

में रहते हैं; ध्यान इन का आहार है और सहस्र कल्प की इन की आयु होती है ।

ब्रह्मलोक के अन्तर्गत प्रथम 'जन' लोक में चार प्रकार की देवजातियाँ हैं (१) ब्रह्मपुरोहित, (२) ब्रह्मकायिक, (३) ब्रह्ममहाकायिक, (४) अजर-अमर । भूत और इन्द्रियाँ इन के वश में रहती हैं तथा आद्यों आद्यों की अपेक्षा उत्तर उत्तर की आयु दूनी दूनी होती है ।

(ब्रह्मलोक के अन्तर्गत) द्वितीय 'तपः' लोक में तीन प्रकार की देवजातियाँ हैं (१) आभास्वर†, (२) महाभास्वर और (३) सत्यमहाभास्वर । भूत, इन्द्रियाँ और प्रकृति इन के वश में रहते हैं, पहले पहले से पिछले पिछले की आयु दूनी होती है, सब का आहार ध्यान, और सहस्र कल्प की आयु होती है । सभी ऊर्ध्वरेता होते हैं, ऊपर की ओर सब का ज्ञान अप्रतिहत (Unobstructed) रहता है और नीचे की भूमियों में के सभी ज्ञान-विषय इन के लिए खुले रहते हैं ।

(ब्रह्मलोक के अन्तर्गत) तृतीय 'सत्य' लोक में चार देवजातियाँ हैं (१) अच्युत, (२) शुद्धनिवास, (३) सत्याभ और (४) संज्ञासंज्ञी ‡ । ये रहने के लिए कोई भवन (गृह) नहीं रखते, अपने आप में स्थिति रखते हैं, ऊपर ऊपर स्थित हैं, प्रधान (अर्थात् सत्त्व, रजः, तमः, इन तीनों गुणों की साम्यावस्था) इन के वश में रहती है, तथा सृष्टि-पर्यन्त भर की इन की आयु होती है । इन में से (१) 'अच्युत' स्थूल-विषयों के ध्यान-मात्र से तृप्त होते हैं, (२) 'शुद्ध (त्रयी-) निवास' सूक्ष्म विषयों के ध्यान से तृप्त होते हैं (३) 'सत्याभ' आनन्द मात्र के ध्यान से तृप्त होते हैं और (४) 'संज्ञासंज्ञी' अस्मिता (अहंकार) मात्र के ध्यान से तृप्त होते हैं । ये भी त्रैलोक्य के ही मध्य में स्थित हैं ।

ये सात लोक हुए, जो सभी सम्प्रज्ञात समाधि के उपासक हैं ।

विदेह और प्रकृतिलय कोटियों के (अर्थात् असम्प्रज्ञात-समाधिनिष्ठ) योगी तो मोक्ष-पद में स्थित हैं, अतः वे लोकों के अन्तर्गत नहीं रक्खे गए ।

यह सब (भुवन-प्रस्तार) योगी को सूर्यद्वार (सुषुम्ना नाडी) में संयम कर के साक्षात्करणीय है । इस प्रकार का संयम (सुषुम्ना नाडी से) भिन्न (गुरु के बतलाए हुए) विषयों में भी कर के तब तक अभ्यास करना चाहिए जब तक यह सब (लोक-प्रस्तार) दृष्टि में आने लगे ।

---

† के 'प्रचिताभ' और 'अञ्जनाभ' हैं । अन्यों में से कई स्पष्ट रूप से योगभाष्य में जनलोक और तपोलोक के निवासी बतलाए गए हैं ।

‡ सत्यलोक के इन चारों प्रकार के निवासियों का वर्णन धर्मसंग्रह के चार 'अरूपावचर' देवों के नामों से मेल खाता है जो ये हैं—"आकाशानन्त्यायतनोपगा विज्ञानानन्त्यायतनोपगा आकिञ्चन्यायतनोपगा नैवसंज्ञानासंज्ञायतनोपगाश्चेति ।"

भरत की यात्रा

[ले० श्रीयुत बाबूराम सक्सेना, एम० ए०, डी० लिट०, प्रयाग विश्वविद्यालय]

वाल्मीकीय रामायण में दशरथ की मृत्यु के अनन्तर भरत को उनके नाना केकयराज के घर से बुलाने के लिए भेजे हुए दूतों के मार्ग का तथा भरत का वहाँ से अयोध्या तक लौटने के मार्ग का वर्णन दिया है। संभव है कि वह 'भूगोल' के पाठकों को रोचक हो इसलिए यहाँ उसका सार दिया जाता है।

दूतों को यथा शीघ्र पहुँचना था, उनके साथ में कुछ माल असबाब भी न था इसलिए सम्भव है कि उन्होंने कुछ ख़तरे के होते हुए भी सीधा मार्ग ग्रहण किया हो। वे घोड़ों पर गए थे, इसलिए यह स्पष्ट है कि रास्ता घोड़ों के प्रवेश के योग्य रहा होगा। प्रथम वे अपर ताल (पहाड़) के दक्षिण छोर और प्रलम्ब (पहाड़) के उत्तर बीच में पड़ी हुई मालिनी नदी के किनारे किनारे चले। हस्तिनापुर में गंगा पार करके वे पश्चिम की ओर बढ़े पांचाल देश पहुँच कर तथा कुरु जाङ्गल देश के मध्य में पहुँच कर तालाब और नदियाँ देखते हुए वे कार्य की आवश्यकता के कारण शीघ्र शीघ्र चले। शरदंडा नदी के किनारे पहुँच कर उन्होंने किनारे पर के सत्योपयाचन नाम वृक्ष की पूजा की और फिर कुलिङ्गा नगरी में प्रवेश किया। वहाँ से अभिकाल (नाम वाले गाँव) में पहुँचे और फिर बोधि भवन (पर्वत ?) से चलकर (अथवा निकली हुई) (दशरथ के पूर्वजों की पुण्य) इक्षुमती नदी को पार किया। फिर वे वाह्लीक देश के बीच में से गुज़रे और सुदामा पर्वत पर पहुँचे। (वहाँ) विष्णु के पदों का दर्शन कर विपाशा, शाल्मली आदि नदियों तथा अन्यान्य तालाबों, झीलों, सिंहों, व्याघ्रों को देखते हुए थके थकाए केकय राज की नगरी गिरिव्रज में रात को पहुँचे।

भरत के रास्ते का वर्णन इससे भिन्न है। अपने नाना और मामा से बिदा होकर केकय राज के मन्त्रियों और सेना सहित चलकर उन्होंने पहले सुदामा नदी पार की फिर चौड़े पाट वाली ह्लादिनी नदी को पार करके पश्चिम की ओर बहने वाली शतद्रु नदी पर जा पहुँचे। एलाधान (गाँव) में नदी उतर कर अपरपर्पट देश में आए। शिलाएँ इकट्ठी करती हुई (बनाती हुई ?) नदी को पार कर शल्य कर्तन ज्वाला मुखी पहाड़ को देखते हुए शिलावहा नाम की नदी पार की।

बड़े बड़े पहाड़ों को तथा चैत्ररथ बन को पार करके सरस्वती और गंगा के संगम पर पहुँचे। वहाँ से वीर मत्स्य देश की उत्तर ओर भारुण्ड बन में प्रवेश किया। इसके उपरान्त वेग वाली कुलिंगा नाम की नदी तथा पर्वतों से ढकी ह्लादिनी (?) (पार करके) यमुना उतरे। वहाँ से साथ में जल लेकर भरत ने भद्र (यान अथवा गज ?) पर सवार होकर बहुत शीघ्र एक बड़ा भारी अरण्य पार किया। अंशुधान (नगर) के पास भागीरथी मिली। वहाँ से (किनारे किनारे चलकर) वे प्राग्वट नगर पहुँचे और वहाँ गंगा उतरे। प्राग्वट से चलकर वह कुटि-कोष्ठिका नदी पर आए और सेना समेत उसे पार करके धर्मवर्द्धन नगर में पहुँचे। फिर दक्खिन की ओर (?) तोरण, जम्बूप्रस्थ और वरुथ नगरों में आए। वरुथ के बन (बाटिका) में वास करके पूरब की ओर चलते हुए उज्जिहाना (नगरी) के उद्यान में पहुँचे। वहाँ से सेना को पीछे आने की आज्ञा देकर वह चल पड़े। सर्व तीर्थ में बास करके उत्तानिका और अन्य नदियों को पहाड़ी घोड़ों की सहायता से पार करके हस्तिपृष्ठक (नगर) में पहुँचे। वहाँ कुटिका (नदी) उतर कर लौहित्य (ग्राम) में सिकतावती नदी पार की। उपरान्त एक साल (ग्राम) में स्थाणुमती और विनत (ग्राम) में गोमती (नदी) को पार कर कलिंग नगर के बन में घोड़ों के थक जाने के कारण रात भर ठहर गए। दूसरे दिन प्रातःकाल, रास्ते में सात रातें बिता कर, अयोध्या में पदार्पण किया।

यदि संभव हुआ तो किसी और समय इन नामों का विशेष विवेचन किया जाएगा।

रघु-दिग्विजय

[लेखक—ला० सीताराम, बी० ए०, रिटायर्ड डिप्टी कलक्टर 'अवधवासी']

महाकवि कालिदास ने अपने रघुवंश के चौथे सर्ग में रघु का दिग्विजय लिखा है। यह दिग्विजय अत्यन्त क्रमबद्ध है। इसमें महाकवि ने जिन जिन देशों में रघु गये थे उन सब की विशेष बातें लिखी हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि महाकवि भी साथ था।

इस दिग्विजय को अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध विद्वान डाक्टर बेरिडेल कीथ (Dr. Berridale Keith) कल्पित मानते हैं और कहते है कि इसका आधार कोई प्रसिद्ध पुराना दिग्विजय हो सकता है। परन्तु हम उनसे सहमत नहीं हैं। कल्पित बात के लिखने के लिये इतने विस्तार की आवश्यकता नहीं होती। यह तो प्रत्यक्ष ही है कि कालिदास रघु का समकालीन नहीं था। और न रघु का दिग्विजय किसी प्राचीन इतिहास या पुराण में लिखा हुआ है।

वाल्मीकि रामायण के ७०वें सर्ग में रघु को केवल तेजस्वी लिखा है। ऐसी स्थिति में कालिदास मन गढ़ंत दिग्विजय क्यों बनाने लगा।

हमने अयोध्या के इतिहास में अयोध्या के गुप्तवंशी राजाओं के वर्णन में लिखा है कि महाकवि कालिदास गुप्तवंशी राज चन्द्रगुप्त द्वितीय का आश्रित था। इस वंश का मूल-पुरुष (श्री) गुप्त था। उसका बेटा घटोत्कच हुआ और उसका पुत्र चन्द्रगुप्त प्रथम हुआ। ये तीनों पहले पाटलिपुत्र (?) के साधारण राजा थे। क्योंकि शिलालेख में इनके नामों के आगे केवल महाराज विरुद है। चन्द्रगुप्त प्रथम का विवाह लिच्छवी वंश की राजकुमारी कुमार देवी के साथ होते ही गुप्त राज्य में कायापलट हो गई। कुछ लोगों का यह अनुमान है कि कुमार देवी अपने पैत्रिक राज्य की उत्तराधिकारिणी हुई थी। इस सम्बन्ध से गुप्त वंश की बड़ी उन्नति हुई। और चन्द्रगुप्त प्रथम महाराजाधिराज कहलाया। उसके बेटे समुद्रगुप्त ने दिग्विजय की जिसका पूरा विवरण उसकी सभा के कवि हरिषेण का रचा हुआ इलाहाबाद के क़िले के भीतर अशोक की लाट पर धर्म लिपियों के नीचे खुदा हुआ है। कई वर्ष हुए उसकी छाप लखनऊ प्राविंशल म्यूज़ियम के प्रधान अधिकारी ने उतारी थी। हमने उसका फोटो लेकर सरस्वती में अनुवाद समेत छपवाया था। इस प्रशस्ति में

दिग्विजय क्रमबद्ध नहीं है। और इसको रघु के दिग्विजय से मिलाना व्यर्थ है। हमारा मत यह है कि चन्द्रगुप्त द्वितीय (जो भारतवर्ष में वीर विक्रमादित्य के नाम से प्रसिद्ध है और जिसके विक्रम विक्रमांक विक्रम+अजित आदि अनेक विरुद हैं) ने भी दिग्विजय किया। सच तो यह है कि दिग्विजय करने ही से उसको इतने विरुद मिले। गुप्तों की अनेक राजधानियाँ थीं। एक पटने में, एक झूसी (प्रयाग) में और एक मालवा जीतने पर उज्जैन में। मालवा प्रान्त समुद्र तट से मिला होने के कारण बड़ा समृद्ध था। योरुप तक के व्यापारी यहाँ आते थे। इसके धन के विषय में कथा प्रसिद्ध है कि यहाँ सोना बरसता था। उसी कारण चार सौ ईस्वी के लगभग मालवा जीतने पर उज्जैनी राजधानी बनाई गई। और यहीं से विक्रमादित्य भागवत होने पर अपनी राजधानी अयोध्या उठा लाया था। चन्द्रगुप्त ने दिग्विजय कब किया इसका पता लगाना कठिन है परन्तु इस बात के कहने की आवश्यकता नहीं है कि उस समय भारतवर्ष का शासन अंग्रेज़ी शासन की भाँति न था। सारा देश छोटे छोटे राज्यों में बटा हुआ था। और इनके शासनकर्त्ता सम्राट को कर देते थे। कुछ थोड़ी सी भुक्तियाँ (सूबे) भाग पतियों के आधीन थीं। शक्तिशाली सम्राट के मरने पर उसके उत्तराधिकारी को बालक जान कर आधीन राजा स्वतन्त्र होने का प्रयत्न करते थे। उनको दबाने के लिये नये राजा को फिर दिग्विजय करने की आवश्यकता हो जाती थी। इसी से हम अनुमान करते हैं कि चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य ने भी दिग्विजय किया। उसके दरबार का महाकवि उसकी विजय-यात्रा में उसके साथ रहा और उसी के दिग्विजय को रघु का दिग्विजय कहकर अपने काव्य में लिख दिया है। अब हम इस दिग्विजय का वर्णन लिखते हैं।

रघु ने पहले पूर्व की यात्रा की और राह के राजाओं को जड़ से उखाड़ते हुए समुद्र तट पर पहुँचे जो ताड़ के बन से काला हो रहा था। यहाँ सुह्म देश था। सुह्म देश को कुछ विद्वान आजकल का अराकान मानते हैं। परन्तु हम उन लोगों से सहमत हैं, जो इसे वंग के पश्चिम का प्रान्त बताते हैं। इसकी राजधानी ताम्रलिप्त थी। ताम्रलिप्त को आजकल तामलुक कहते हैं। सुह्म के राजा ने रघु की आधीनता स्वीकार कर ली।

यहाँ यह विचारने की बात है कि उत्तर कोशल और सुह्म के बीच में मगध और अंग राज्य थे। उनका क्या हुआ? ये दोनों राज्य न तो कोशल के अन्तर्गत थे न उसके आधीन थे। इसका प्रमाण यह है कि इन्दुमती के स्वयम्बर में जिसमें रघु का बेटा अज भी गया था और जिसका वर्णन रघुवंश के छठे सर्ग में है। मगध और अंग के दोनों राजा आये थे। हमारे मित्र बाबू क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय का अनुमान है कि महाकवि मगध और अंग दोनों देश के राजाओं से प्रेम रखता था और उनका जी दुखाना नहीं चाहता था। छठे सर्ग में अवसर पा कर उसने दोनों की बड़ाई कर दी।

सुह्म से आगे चलकर बंगालियों से रघु की मुठभेड़ हुई। ये लोग नाव पर

चढ़कर लड़ते थे। रघु ने इनकी शक्ति नष्ट कर दी।

यहाँ से कपिशा (आजकल की सुवर्ण रेखा) उतर कर रघु कलिंग देश में पहुँचे। कलिंग देश वैतरणी के दक्षिण गोदावरी तक फैला हुआ था। पुरातत्व वेत्ता कनिंघम का मत है कि यह देश उड़ीसा के दक्षिण और द्रविड़ के उत्तर में था। इसके दक्षिण-पश्चिम में गोदावरी और पश्चिम-उत्तर में इन्द्रावती थी। महाभारत के समय में उड़ीसा भी इसी के अन्तर्गत था। मणिपुर (चिल्का झील के पास मानिक पत्तन नाम का बन्दरगाह) और राज महेन्द्री इसके मुख्य नगर थे। परन्तु रघु के दिग्विजय के समय में उड़ीसा (उत्कल) इससे भिन्न था। और उत्कल के राजा ने रघु के आधीन होकर उन को राह बतायी थी।

इसके आगे रघु महेन्द्रगिरि पर गये जहाँ महाभारत के समय में भी परशुराम जी रहते थे। कलिंग के राजा सदा से वीर रहे हैं। कलिंगवालों ने अशोक के भी दाँत खट्टे कर दिये थे यद्यपि वे अन्त को हार गये। रघु से कलिंग राज लड़ा पर वह हार गया। उसकी सेना में हाथी बहुत थे। कलिंग से रघु दक्षिण गये और कावेरी उतरे। यहाँ पाण्ड्य देश था। मलय पर्वत और ताम्रपर्णी नदी इस देश की स्थिति निश्चित करते हैं। आज कल के टिनेवली और रामेश्वरम इसी के अन्तर्गत थे। इसकी राजधानी उरगाख्य पुर थी। उरग का अर्थ नाग है और मदुरा का तामिल नाम अलवाव (नाग) है। इससे विद्वान लोग अनुमान करते हैं कि पाण्ड्य देश की राजधानी मदुरा थी।

ताम्रपर्णी जहाँ समुद्र में गिरती है वहाँ मोती निकलते थे। पाण्ड्य राज ने रघु को सम्राट मानकर मोती भेंट में दिये थे।

उन दिनों पूर्वी घाट के दक्षिणी भाग को दर्दुर कहते थे। उसके और मलय गिरि के बीच में चल कर रघु सह्यपर्वत पर आये। कावेरी के उत्तर में पश्चिमी घाट का नाम सह्य है। यहीं मलय देश (कनाड़ा, केरल) था। इस देश ने भी रघु का लोहा मान लिया। इसकी मुख्य नदी मुरला थी जिसे अब काली नदी कहते हैं।

वहाँ से उत्तर चलने पर अपरान्त देश मिला। जिसका एक भाग आजकल कोणकण के नाम से प्रसिद्ध है। मलावार का एक राज्य भी इसी के अन्तर्गत था। वहाँ के राजा ने भी रघु को कर दिया।

आगे चल कर रघु ने त्रिकूट पर अपना जयस्तम्भ बनाया। त्रिकूट लंका का प्रसिद्ध पर्वत है। जिसके ऊपर रावण की राजधानी बसी हुई थी। तुलसीकृत रामायण किष्किन्धा कांड में हनुमान जी कहते हैं 'आनौ यहाँ त्रिकूट उपारी'।

लंका जीत कर रघु स्थल मार्ग* से पारसीकों को जीतने गये। बीच में विदर्भ अवन्ति (मालवा) अनूप और सूरसेन देशों से मेल होने के कारण छेड़ छाड़ न की गई। अनूप देश के ही अन्तर्गत भृगुकच्छ था।

---

* इससे सूचित होता है कि जलमार्ग भी था।

पारसीक पारस देश के रहनेवाले थे। सूर्य वंशी राजा सगर ने पल्हवों को श्मश्रुधारी (दाढ़ीवाले) बना दिया था। पारसी और पल्हल्वी आज कल भी पर्याय-वाची शब्द हैं। पारसवाले घोड़ों पर चढ़ कर लड़ते थे और उनके दाढ़ी थी। सम्भव है इन्हीं यवनों में अश्वकान (घोड़ा पर चढ़नेवाले) भी थे। अफ़गान शब्द अश्वकान से बिगड़ कर बना है। ईरान में अब भी अंगूर बहुत होते हैं। और शीराज़ की अंगूरी शराब प्रसिद्ध है। यही शराब रघु के सैनिकों ने पी थी।

यहाँ से रघु कुबेर दिशा अर्थात् उत्तर को गये। कुबेर का निवास स्थान कैलाश है। इसी से उत्तर दिशा को कौबेरी दिशा कहते हैं। हिन्दुस्तान के नक़शे में काश्मीर के उत्तर हूनदेश है। हून लोग पीछे बड़े प्रबल हो गये। इन्हीं आक्रमणों से गुप्त-राज छिन्न भिन्न हो गया था। इन्हीं हून लोगों की राह में काश्मीर देश था। जिसके केसर के खेतों में चलने से घोड़ों के शरीर में भी केसर लग गई। रघु ने हूनों को परास्त किया और कम्बोजों को दबाया। कम्बोज देश बलख और गिल्गिट घाटी के बीच में था। लद्दाख भी इसी के अन्तर्गत था। यहाँ के घोड़े और अखरोट प्रसिद्ध थे। कम्बोज के रहनेवाले कुछ तो मुसलमान होकर काबुल में बसे कुछ भारतवर्ष में चले आये। यहाँ जो मुसलमान हो गये वे कम्बोह कहलाते हैं। जो हिन्दू हैं वे अपने को कम्बोह या कम्बुज कहते हैं।

यहाँ से रघु की सेना हिमालय में घुसी। और गंगा के किनारे ठहरी। यहीं कस्तूरी मृग की सुगन्धि से हवा बसी हुई थी। और यहीं पहाड़ियों (सम्भवतः गढ़-वालियों) से लड़ाई हुई जो गोफनों से पत्थर फेंक कर लड़ते थे। उनको जीत कर रघु आगे बढ़े तो उत्सव संकेत पहाड़ी मिले जिन्हें आप्टे महाशय जंगली बतलाते हैं। संभव है कि ये नैपाली हों। यहाँ से ऐसा जान पड़ता है कि रघु कैलाश भी गये। और लौहित्य (ब्रह्मपुत्र) उतर कर प्राग्ज्योतिषपुर आये जहाँ का राजा डर के मारे काँपने लगा।

इसके आगे कामरूप देश था। वहाँ के राजा ने हाथी भेंट देकर रघु के पाँव पूजे।

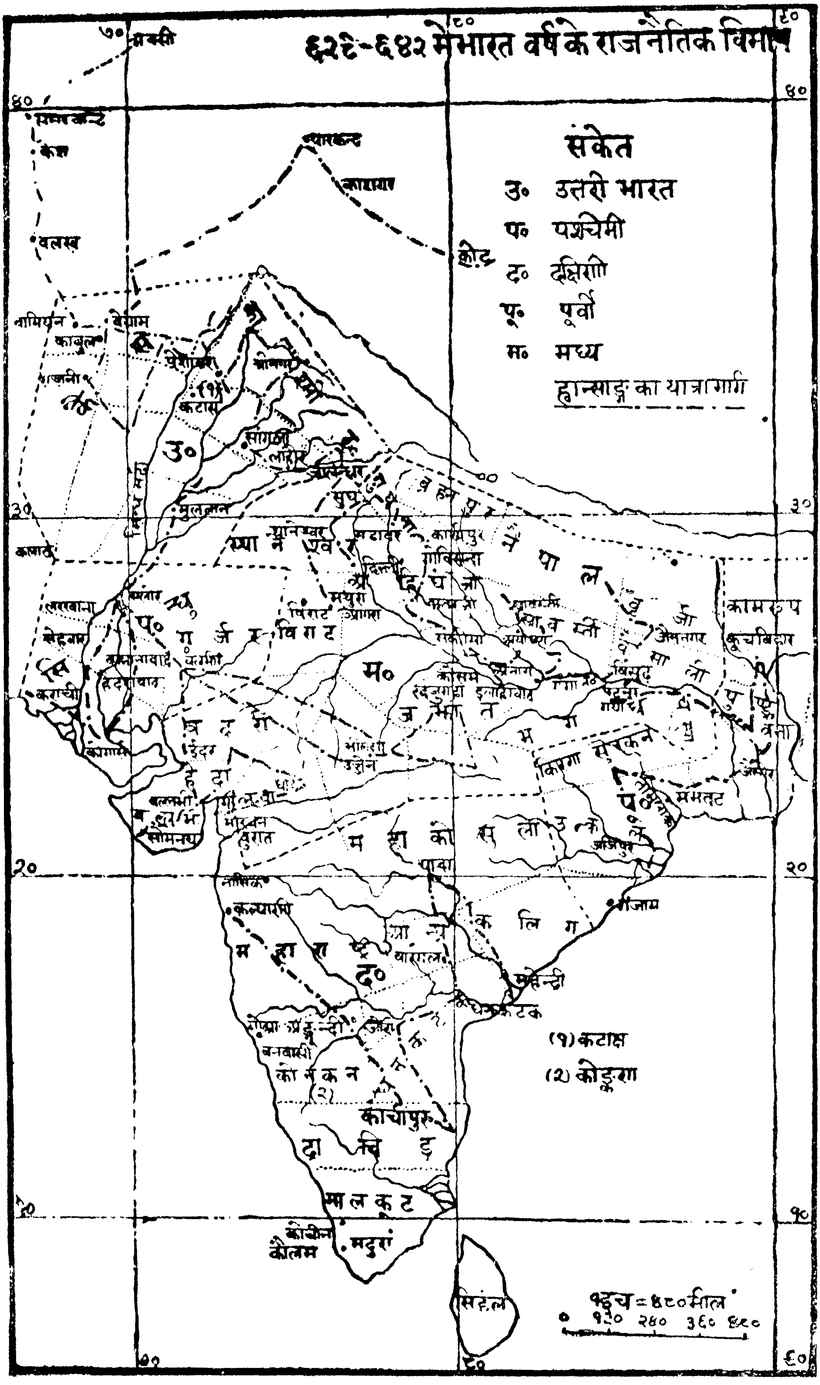
यहीं दिग्विजय समाप्त होता है।

महाभारत कालीन भूगोल

यह भारतवर्ष इन्द्र देवता का प्रिय है और वैवस्वत मनु, वेनपुत्र पृथु, महात्मा इक्ष्वाकु, ययाति, अम्बरीष, मान्धाता, नहुष, मुचुकुन्द, उशीनर पुत्र शिवि, ऋषभ, ऐल, नृग, कुशिक, महात्मा गाधि, सोमक, राजर्षि दिलीप आदि राजा और अन्यान्य बलिष्ठ महात्मा क्षत्रियों का भी प्रिय है।

इस भारत में महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्षवान, विन्ध्य, और पारियात्र ये ही पहाड़ों के सात कुल हैं। इन सब पहाड़ों के पास अमजान हज़ारों हज़ार विपुल, सावान् विचित्र सानुमान् पहाड़ विद्यमान हैं। उनको छोड़कर भी नीच लोकों से बसे हुए बहुत से छोटे छोटे पहाड़ हैं।

इन नदियों का पानी आर्य, म्लेच्छ और मिश्रित जाति के आदमी काम में लाते हैं—विपुला, गंगा, सिन्धु, सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, बाहुदा। शतद्रू, चन्द्रभागा, यमुना, दृषवती, विपाशा, विपापा, स्थूलबालुका। वेत्रवती, कृष्णवेणा, इरावती, वितस्ता, पयोष्णी, देविका। वेदस्मृता, वेदवती त्रिदिवा, इक्षुला, कृमि, करीषिणी, चित्रवाहा, चित्रसेना। गोमती, धूतपापा, बन्दना, कौषकी, त्रिदिवा, कृत्या, निचिता लोहितारिणी। रहस्या, शतकुम्भा, सरयू, चर्मवती, वेत्रवती, हस्तसोमा, दिश्, शरावती, पयोष्णी, वेणा, भीमरथी, कावेरी, चुलुका, वाणी, शतबला, नीवारा, अहिता, सुप्रयोगा, पवित्रा, कुंडली, सिन्धु, राजनी, पुरमालिनी, पूर्वाभिरामा, वीराभीमा, ओघवती, पाशाशिनी, पापहरा, महेन्द्रा, पाटलावती, करीषिणी, असिक्नी, कुशचीरा, मकरी, प्रवरा, मेना, हेमा, घृतवती, पुरावती, अनुष्णा, शैब्या, कापी, सदानीरा, अधृष्या, कुशधारा, सदाकान्ता, शिवा, वीरवती, वस्त्रा, सुवस्त्रा, गौरी, कम्पना, हिरण्वती, वरा, वीरकरा, पञ्चमी, रथचित्रा, ज्योतिरथा, विश्वमित्रा, कपिञ्जला, उपेन्द्रा, बहुला, कुवीरा, अम्बुवाहिनी, बिनदी, पिञ्जला, वेणा, तुङ्गवेणा, विदिशा, कृष्णवेणा, ताम्रा, कपिला, खलु, सुवामा, वेदाश्वा, हरिश्रावा, महायगा, शीघ्रा, पिच्छला, भारद्वाजी, कौशिकी, बाहुदा, शोणा, चन्द्रमा, दुर्गा, चित्रशिला, ब्रह्मवेध्या, बृहद्वती, यवक्षा, रोही, जाम्बूनदी, सुनसा, तमसा, दासी, वसामन्या, वराणशी, नीला, धृतवती, पर्णाशा, मानवी, वृषभा, ब्रह्ममेध्या, बृहद्वनी। हे जनाधिप ये और इनसे अन्य बहुत महानदियाँ हैं।


६२६-६४२ में भारत वर्ष के राजनैतिक विभाग
संकेत
उ० उत्तरी भारत
प० पश्चिमी
द० दक्षिणी
पू० पूर्वी
म० मध्य
ह्वान्साङ्ग का यात्रामार्ग
काबुल
कटास
उ०
मुलतान
सांगल
लाहौर
थानेश्वर
मथुरा
आगरा
विराट
प०
गु र्ज र
म०
उज्जैन
कौसम
इलाहाबाद
पटना
नेपाल
कामरूप
कूचबिहार
समतट
म हा को स ल
क लि ग
म हा रा ष्ट्र
द०
नासिक
कल्याणी
बनवासी
काञ्चीपुर
द्रा वि ड
मा ल कू ट
मदुरा
कौलम
सिंहल
(१) कटाक्ष
(२) कोङ्कणा
१इञ्च=४८०मील
० १२० २४० ३६० ४८०

सदानीरामया, कृष्णा, मन्दगा, मन्दवाहिनी, ब्राह्मणी, महागौरी, दुर्गा, चित्रोपला, चित्ररथा, मंजुला, वाहिनी, मंदाकिनी, वैतरणी, कोषा, शुक्तिमती, अनंगा, वृषसाह्वया, लोहित्या, करतोया, वृषकाह्वया, कुमारी, ऋषिकुल्या, मारिषा, सरस्वती, मन्दाकिनी, सुपुण्या, सर्वा और गंगा, ये सब नदियां जगत की माता के समान और महाफल देने वाली हैं। इस प्रकार अन्य २ लाखों नदियाँ मनुष्यों से अप्रकाशित हैं। लेकिन जहाँ तक मुझे याद आया उन सब का नाम मैंने कह सुनाया। अब जनपदों का नाम कहते हैं।

कुरु, पाञ्चाल, शाल्व, माद्रेय, जांगल, शूरसेन, पुलिन्द, बोध, माल, मत्स्य, कुशल्य, सौशल्य, कुन्ति, कान्ति, कोसल, चेदि, मत्स्य, करुष, भोज, सिन्धु, पुलिन्दक, उत्तम, दशार्ण, मेकल, उत्कल, पंचाल, कोशल, नैकपृष्ठ, धुरन्धर, गोध, मन्द्र, कलिंग, काशी, अपरकाशी, जठर, कुकुर, दशार्ण, कुन्ति, अवन्ति, अपरकुन्ति, गोमन्त, मण्डक, संड, विदर्भ, रूपवाहिक, अश्मक, पाण्डुराष्ट्र, गोपराष्ट्र, करीति, अधिराज्य, कुशाद्य, केवल मल्लराष्ट्र, वारवास्य, यवाह, चक्र, चक्राति, शक, विदेह, मगध, स्वक्ष, मलज, विजय, अंग, वंग, कलिंग, यकृल्लोम, मल्ल, सुदेष्ण, प्रह्लाद, माहिक, शशिक, बाह्लीक, वाटधान, आभीर, कालतोयक, अपरान्त, परान्त, पंचाल, चर्ममंडल, अटवीशिखर, मेरुभूत, उपावृत्त, अनुपावृत्त, स्वराष्ट्र, केकय, कुन्द, अपरांत, माहेय, कक्ष, सामुद्र, निष्कुट, बहु, अन्ध्रदेश, अन्तर्गिर्य, बहिर्गिर्य, अंगमलज, मगध, मानवर्जक, समतर, प्रावृषेय, भार्गव, पुण्ड्र, भर्ग, किरात, सुदृष्ट, यामुन, शक, निषाद, निषध, आनर्त्त, नैऋत, दुरुलि, प्रतिमत्स्य कुंतल, कोसल, तीरग्रह, शूरसेन, ईजिक, कन्यक, शुण, तिलभार, मसीर, मधुमत, सुकन्दक, काश्मीर, सिन्धुसौवीर, गान्धार, दर्शक, अभीसार, उलूत, शैवल, बाह्लिक, दार्वीचव, नव, दर्व, वातज, अमरथ, उरग, बहुवाद्य, सुदाम, सुमल्लिक, वध्र, करीषक, कुलिन्द, उपत्यक, वनायु, दश, पार्श्वरोम, कुशबिन्दु, कच्छ, गोपालकक्ष, जांगल, कुरुवर्णक, किरात, बर्बर, सिद्ध, वैदेह, ताम्रलिप्तक, ओण्ड्र, म्लेच्छ, सैसिरिन्ध्रु और पार्वतीय।

अब दक्षिण देशीय जनपदों के नाम सुनिये।

द्रविड, केरल, प्राच्य, मूषिक, वनवासिक, कर्णाटक, महिषक, विकल्प, भूषक, झिल्लीक, कुन्तल, सौहृद, नभकानन, कोकुट्टक, चौल, कोङ्कण, मालवनर, समङ्ग, करक, कुकुर, अंगार, मारिष, ध्वजिनी, उत्सव, संकेत, त्रिगर्त्त, शाल्वसेनि, व्यूक, कोकबक, प्रोष्ठ, समवेगवश, विन्ध्य, चुलिक, पुलिन्द, वल्कल, मालव, बल्लव, अपरबल्लव, कुलिन्द, कालद, कुण्डल, करट, मूषक, स्तनबाल, सनीप, घट, सृंजय, अठिदाप, शिवाट, तनय, सुनय, ऋषिक, विदभ, काक, तंगण और परतंगण। अब उत्तर देशों की कथा सुनिये—

अपरम्लेच्छ, क्रूर, चीन, यवन, कम्बोज, सकृद्ग्रह, कलत्र्य, हूण, पारसिक, रमण, चीन और दश मालिक।

इन देशों में दारुण म्लेच्छ जातियाँ रहती हैं और क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र

जातियों के रहने के ये सब देश हैं, आभीर, दरद, काश्मीर, पशु, खाशीर, अन्त-चार, पल्हव, गिरिगह्वर, आत्रेय, भरद्वाज, स्तनयोषिक, प्रोषक, कलिङ्ग ।

किरात जाति के लोगों के रहने का प्रदेश, तोमर, हन्यमान, और करभञ्जक हैं ।

पूर्व तथा उत्तर दिशा के अन्यान्य देशों का विवरण मैंने उद्देश्य मात्र कहा । ये सब भूमि कामदुधा धेनु के समान है । गुण और बल के अनुसार सम्यक् प्रकार से अनुष्ठान करने पर इससे धर्म, अर्थ, काम दोहन कर सकते हैं । धर्मार्थ कोविद सूर राजा लोग ऐसी ही भूमि के लिये उत्सुक हुए हैं । वे ही तपस्वी क्षत्रिय लोग धन सम्पत्ति से लोभी होकर युद्ध में प्राण त्याग करने को उद्यत हुए हैं । भूमि ही देवता और मनुष्यों की कामना रूपी परमगति हुई है । जैसे मांस के लोभ से कुत्ते सब एक दूसरे से व्याकुल होते हैं पृथ्वी के भोगविलासी क्षत्रिय भी उसी दशा में हुए हैं । अपनी कामना को समाप्त करके कोई तृप्ति नहीं लाभ करता है । इस-लिये कुरु पाण्डव साम, भेद, दान वा दण्ड द्वारा भूमि लेने के लिये यत्न करते हैं । भूमि पर खूब ध्यान रखने से भूमि ही माता, पिता, पुत्र आदि का आकाश और स्वर्ग के समान अवलम्बन होती है ।

श्रीमद्भागवत पुराण का भूगोल

राजा प्रियव्रत के रथ के पहिये से सात समुद्र हो गये। उन समुद्रों के मध्य में सात द्वीप हैं। उन द्वीपों में नाम क्रमशः ये हैं:—जंबू, प्लक्ष, शाल्मल, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर। एक समुद्र के बाहर एक द्वीप, पुनः समुद्र पुनः द्वीप है।

समुद्रों के नाम ये हैं—क्षार, इक्षु, सुरा, घृत, क्षीर, दधि, शुद्ध सागर। इनसे सातों द्वीप परिखा की तरह घिरे हुए हैं।

भारतवर्ष में बहुत सी नदियाँ और पर्वत हैं—पर्वतों के नाम क्रमशः बतलाये जाते हैं—मलयगिरि, मंगलप्रस्थ, मैनाक, त्रिकूट, ऋषभ, कोल्लक, सह्य, देवगिरि, ऋष्यमूक, श्री शैल, वेंकट, महेन्द्र, वारिधार, विंध्य, शुक्तिमान्, ऋक्षगिरि, पारिजात, द्रोण, चित्रकूट, गोवर्धन, रैवतक, ककुभ, नील, गोकामुक इन्द्रकील, कामगिरि, ये प्रसिद्ध पर्वत हैं और इनके अतिरिक्त कई एक पर्वत हैं।

नदियों के नाम ये हैं—चंद्रवशा, ताम्रपर्णी, अवटोदा, कृतमाला, वैहायसी, कावेरी, वेणी, पयस्विनी, शर्करावर्ता, तुंगभद्रा, कृष्णा, वेण्या, भीमरथी, गोदावरी, निर्विन्ध्या, पयोष्णी, तापी, रेवा, सुरसा, नर्मदा, चर्मण्वती, सिंधु, रंध, शोण, नदी, महानदी, वेदस्मृति, ऋषिकुल्या, त्रिसामा, कौशिकी, मंदाकिनी, यमुना, सरस्वती, दृषद्वती, गोमती, सरयू, रोधस्वती, सप्तवती, सुषोमा, शतद्रू, चंद्रभागा, मरुद्वृद्धा, वृतस्ता, असिक्नी, और विश्वा।

जंबूद्वीप के अंतर्गत आठ और उपद्वीप हैं उनके नाम ये हैं—स्वर्णप्रस्थ चंद्र शुक्र, आवर्तन, रमणक, मंदरहरिण, पांचजन्य, सिंहल और लंका द्वीप। जंबूद्वीप का प्रमाण १ लक्ष योजन है।

प्लक्षद्वीप के अन्तर्गत पर्वतों के नाम—मणिकूट, वज्रकूट, इन्द्रसेन, ज्योतिष्मान्, सुपर्ण, हिरणष्ठीव, मेघमाल।

कुश द्वीप के पर्वतों के नाम—चक्र, चतुश्शृङ्ग, कपिल, चित्रकूट, देवानिक, ऊर्ध्वरोमा, द्रविण।

कुशद्वीपों की नदियों के नाम—रसकुल्या, मधुकुल्या, मित्रविंदा, श्रुतिविन्दा, वेदगर्भा, घृतच्युता, मंत्रमाला।

क्रौंच द्वीप के पर्वतों के नाम—आम, मधुरुह, मेघपृष्ठ, सुधामा, भाजिष्ठ, लोह तारण, बनस्पति, घृतपृष्ठसुत ।

वाराह-मिहर के अनुसार
(५५० ई० का) भारत वर्ष



क्रौंच द्वीप की नदियों के नाम—अमपा, अमृतौघा, आर्य्यका, तीर्थवती, वृत्त-रूपवती, पवित्रवती, शुक्का । पचास करोड़ योजन पृथ्वी का सम्पूर्ण विस्तार है । इस जम्बू द्वीप में नव खण्ड हैं । एक एक खण्डों का विस्तार नौ नौ योजन है ।

कैलाश पर्वत का वर्णन

कैलाश पर्वत पर जाकर सब देवताओं ने देखा कि किन्नर, गंधर्व, अप्सरा इत्यादि बहुत प्रकार की रमणियों से भूषित थीं । और वह पर्वत अनेक प्रकार की धातुओं अनेक प्रकार के वृक्षों, नदियों, झरनों और कंदराओं से रमणीक है । देवताओं की सिद्ध स्त्रियों से, और मयूर कोकिलादि पक्षियों के शब्द से वह शोभित है । इस पर्वत पर मिलने वाले वृक्षों के नाम ये हैं—मंदार, पारिजात, कल्पद्रुम, सरल, तमाल, रसाल, कोविदार, अर्जुन, आम्रादि । इनके अतिरिक्त यह पर्वत कदम्ब, नाग, कुन्नग, चम्पक पाटल, अशोक, बकुल, कुन्द, कुर्बक, शतपत्र, वेणुक, पानस, कंटक, उदुंबर, अश्वत्थ, निग्रोध, बट, हिंगू, खर्जूरेत्यादि वृक्षों से युक्त है ।

अलकनन्दा नदी के जल में स्नान करके श्री पार्वती जी ने उस नदी के जल को शुद्ध कर दिया । जिस कारण से नदी और पर्वत की शोभा को देखकर देवगण चकित हो गये ।

अलका पुरी में कुबेरजी बास करते हैं । वहाँ पर सौगन्धिक नाम बन को देवता लोग देखने लगे । वहाँ पर विमानों में चढ़कर देवताओं की स्त्रियाँ उड़ती हैं और क्रीड़ा करती हैं ।

सुवर्ण, महारत्न विमानों और स्त्रियाँ से युक्त यक्ष लोग कुबेर की अलकापुरी की शोभा बढ़ाते हैं।

अलकापुरी में एक बहुत बड़ा वट वृक्ष है। वह सौ योजन ऊँचा है और पंच सप्त योजन में उसका बिस्तार है। इस वृक्ष के नीचे शिव आदि अनेक देवता लोग विश्राम करते हैं। और उसी वृक्ष के नीचे योगी, तपस्वी योगादिकों की सिद्धि करते हैं। इसी प्रकार के जन्तु और वृक्ष तथा मणि वस्तुओं द्वारा वह कैलाश शोभित है।

राधेश्याम अग्रवाल
फोर्थ फार्म, ई० सी० कालेज प्रयाग

पांडवों की तीर्थ यात्रा

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, कुन्ती पुत्र महाराज युधिष्ठिर को चलते हुये देख बनवासी तपस्वी उनके पास आकर ऐसा बोले, हे राजन् आप भाइयों के सहित लोमश मुनि को संग लेकर पवित्र तीर्थों को जाने वाले हैं। हे पाण्डव ! हे महाराज ! आप को उचित है, कि हम लोगों को भी संग ले चलिये, क्योंकि हम आपके बिना सिंहादि जन्तुओं से भरे हुये दुःख से जाने योग्य घोर अगम्य तीर्थों में नहीं जा सकते।

हे पृथ्वी नाथ ! हम लोग आपके संग जाकर प्रभास तीर्थ, महेन्द्र आदिक पर्वत, गंगादिक नदी और प्लक्ष आदिक वृक्षों को देखने की इच्छा करते हैं। यदि आप को ब्राह्मणों में कुछ भी प्रेम हो तो महाराज हमारे इन वचनों को स्वीकार कीजिये इससे आप का कृत कल्याण होगा। हे महाबाहो, वे सब तीर्थ तप नाशक राक्षसों से भरे हुये हैं। उन सब में आप हमारी रक्षा करने योग्य हैं। जो तीर्थ धौम्य ने और बुद्धिमान नारद ने कहे थे—वे ही महातपस्वी देवर्षि लोमश ने भी कहे। हे नरनाथ ! आप विधि पूर्वक उन तीर्थों का दर्शन कीजिये और हम लोगों को भी संग ले लीजिये, लोमश मुनि सब की रक्षा करेंगे।

राजा उन मुनियों के वचन सुन आंसुओं से नहा गये। अनन्तर वीर भीमसेन आदिक भाइयों की सम्मति लेकर पाण्डव सिंह युधिष्ठिर ने कहा कि बहुत अच्छा। अनन्तर लोमश तथा पुरोहित धौम्य की आज्ञा लेकर अपने भाई और सुन्दराङ्गी द्रौपदी के सहित महाराज ने उस बन से चलने का विचार किया, उसी समय महाभाग व्यास, पर्वत और नारद काम्यक बन में युधिष्ठिर को देखने की इच्छा से आये।

तब देव ऋषि और ब्राह्मण लोग स्वस्ति पाठ करने लगे, हे राजन् ! अनन्तर वीर पाण्डवों ने लोमश, व्यास, नारद और पर्वत के चारणों को प्रणाम कर, मार्गशीर्ष मास समाप्त होते ही पुष्य में धौम्य ऋषि और उन बनवासी ऋषियों के सहित चले, जटा और मृगचर्म धारी पाण्डव गण न टूटने योग्य कवच पहन कर चले, उनके संग पन्द्रह रथ थे, और इन्द्रसेन आदिक सारथी, रसोइये, सेवक और प्रधान कर्मचारी भी संग थे। हे जनमेजय ! वे सब लोग शस्त्र लिये, कवच बाँधे, बाण भरे तूणीर लगाये पूर्व की ओर मुख करके चले।

वीर पाण्डव लोग सब पुरुषों के सहित इस प्रकार क्रम से जहाँ तहाँ बसते हुये नैमिषारण्य तीर्थ में पहुँचे। हे भारत। पाण्डव लोगों ने उस तीर्थ में जाकर गोमती में स्नान किया और अनेक गौ तथा बहुत धन दान किया। कन्या तीर्थ, अश्वतीर्थ, गोतीर्थ, कालकोटि और विषप्रस्थ पर्वत में जाकर पितर और देवताओं की पूजा की तथा ब्राह्मणों को बहुत दान देकर तृप्त किया। वहाँ से चल कर उन लोगों ने 'बाहुदा' नदी में स्नान किया।

हे पृथ्वीनाथ! वहाँ से देवताओं के यज्ञ स्थान प्रयाग में पहुँचे वहाँ जाकर स्नान करके ब्राह्मणों को बहुत धन दिया। वहाँ से महात्मा पाण्डव लोग मुनि सेवित प्रजापति की वेदी पर गये। हे राजन्! हे भारत! उस स्थान में ब्राह्मणों के सहित पाण्डवों ने जाकर निवास तथा उत्तम तप किया। हे राजन्! इस प्रकार ब्राह्मणों को धन अन्न से संतुष्ट करते हुये पाण्डव लोग गया में गये, जहाँ धर्मज्ञ महात्मा राजा गय ने पर्वत का संस्कार किया है।

वहीं राजर्षि पुण्यात्मा राजा गय ने अपने नाम से गयशिर नामक तीर्थ स्थापित किया है, वहीं वेत्र वृक्षों से शोभित उत्तम घाट वाली रमणीय फल्गु नाम की महानदी है। जहाँ पवित्र शिखा वाला उत्तम दिव्य पर्वत है, वहीं पर मुनि सेवित उत्तम ब्रह्मसर नामक तीर्थ है, जहाँ से भगवान अगस्त्य मुनि सूर्य पुत्र यम के पास गये थे। वहीं सनातन धर्मराज यम ने वास किया। उसके निकट ही सब नदियों का एक सोता है, जहाँ पर साक्षात् पिनाकधारी महादेवजी वास करते हैं, उस स्थान पर रह कर महात्मा युधिष्ठिर ने चातुर्मास्य यज्ञ किया, जहाँ महा अक्षयवट है जिसका फल अक्षय है। जहाँ यज्ञ करने से अक्षय पुन्य होता है, उसी स्थान में युधिष्ठिर ने यज्ञ किया था। उस समय उस देश के तपोधन सहस्रों ब्राह्मण युधिष्ठिर के पास आये थे। उस समय महाराज युधिष्ठिर ने वेदोक्त विधि के अनुसार चातुर्मास्य यज्ञ को समाप्त करके तेज और तप से भरे हुये सब वेदों के ज्ञाता ब्राह्मणों से महात्माओं की सभा में बैठकर पवित्र वार्तालाप भी किया था।

अनन्तर बहुत दक्षिणा देनेवाले कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिर वहाँ से चले और अगस्त्याश्रम में पहुँचकर दुर्जया स्थान (जहाँ अगस्त्य ने वातापी को मारा था) में ठहरे। वहाँ पर महाराज युधिष्ठिर ने द्रौपदी तथा अपने बन्धुओं के साथ स्नान करके पितर तथा देवताओं का तर्पण किया। उसमें स्नान करते ही युधिष्ठिर का तेज बहुत ही बढ़ गया और शत्रुओं से जीतने योग्य न रहे। तब कुरुनन्दन युधिष्ठिर ने लोमश मुनि से प्रश्न किया कि हे भगवन्! पहिले समय में परशुराम का तेज क्यों नष्ट होगया था, और पुन: उनका तेज क्यों प्राप्त हुआ था?

श्री वैशम्पायन मुनि बोले हे भरत कुल सिंह जनमेजय! तब कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर क्रम से चलते पाप भय का नाश करनेवाली नन्दा और अपर नन्दा नदी के तट पर पहुँचे। वहाँ पर सुन्दर हेमकूट नामक पर्वत पर जाकर राजा युधिष्ठिर

ने अनेक अद्भुत भावों को देखा। जहाँ सहस्रों मेघ तथा ओले वायु के वश से स्थिर थे। जिनके भय से पुरुष ऊपर नहीं जा सकते थे। इसी से पुरुषों को महा दुःख होता था। जहाँ सदा ही वायु चलता था; सदा ही जल बरसता था जहाँ कि वेद के मंत्र सुनाई देते थे परन्तु पढ़नेवालों का रूप नहीं प्रदर्शित होता था। जहाँ संध्या और भोर को भगवान अग्नि के दर्शन होते थे, जहाँ तप की विघ्न करने वाली मक्खी पुरुषों को काटती थीं, जहाँ जाने से चित्त को बहुत ग्लानि होती थी जहाँ जाने से घर के पुरुष की स्मरण होती थी महाराज ऐसी ऐसी अनेक विचित्र बातों को देख लोमश ऋषि से इसका कारण पूछा।

राजा युधिष्ठिर ने अपने पुरुषों के सहित नन्दा में स्नान किया। वहाँ से पवित्र, रम्य, सुन्दर, शीतल जलवाली कौशिकी नदी को चले। श्री लोमश मुनि बोले हे भरत कुल सिंह ! यह पवित्र देव नदी कौशिकी है। यही विश्वामित्र मुनि का रमणीय आश्रम है और यह महात्मा काश्यप मुनि का पवित्र आश्रम है। यहीं जितेन्द्रिय तपस्वी काश्यप मुनि के पुत्र ऋश्यश्रृंग का जन्म हुआ था जिन्होंने अपने तप के प्रभाव जल बरसाया था जिनके भय से अकाल में इन्द्र ने वर्षा की थी, वह काश्यप के पुत्र ऋश्यश्रृंग ऋषि हरिनी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे, यह अद्भुत वार्ता लोमपाद राजा के राज्य में हुई थी जिनको बहुत धान्य उत्पन्न होने के पश्चात् राजा लोमपाद ने अपनी पुत्री शान्ता इस प्रकार दान की थी जैसे सूर्य्य ने सावित्री।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले हे जन्मेजय ! पाण्डु नन्दन युधिष्ठिर वहाँ से कौशिकी पर गये, वहाँ से क्रम से सब तीर्थ और देव-स्थानों में जाते हुए गंगा और समुद्र के संगम में पहुँचे। उन्होंने पाँच सौ नदियों के संगम में स्नान किया अनन्तर महाराज वीर युधिष्ठिर अपने भाइयों के सहित कलिंग देश की ओर समुद्र के तट की ओर से चले।

लोमश मुनि बोले, हे कुन्ती नन्दन यही कलिङ्ग देश है, यही वैतरणी नदी है यहीं धर्म ने देवताओं की शरण लेकर यज्ञ किया था। यह ऋष और ब्राह्मणों से युक्त और यज्ञिय पर्वत से शोभित इस नदी के उत्तर तीर है, यह स्वर्ग जाने वाले पुरुषों को विमान के समान है। इसी स्थान में पहिले ऋषियों ने अनेक यज्ञ किये थे।

वैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर पाण्डव लोग द्रौपदी सहित वैतरणी पार उतर कर पितरों का तर्पण करने लगे। राजा युधिष्ठिर ने वहाँ पर एक रात्रि निवास कर भाइयों का अति सत्कार किया। चतुर्दशी के दिवस भगवान परशुराम ने ब्राह्मणों के सहित पाण्डवों को दर्शन दिया। अनन्तर महानुभाव महाराज युधिष्ठिर पवित्र तीर्थों में घूमते हुए समुद्र के तट पर ब्राह्मणों से सेवित अनेक तीर्थों को देखने लगे। वहाँ से उत्तम चरित्र वाले पाण्डु के पुत्र सूर्य पुत्र यम से उत्पन्न राजा युधिष्ठिर भाइयों के साथ तीर्थ स्नान कर अत्यन्त पवित्र समुद्र गामिनी प्रशस्ता नामक नदी पर पहुँचे। यहाँ पर भी इन्होंने स्नान करके पितर और देवताओं का तर्पण किया। सब ब्राह्मणों को बहुत धन देकर समुद्र गामिनी गोदावरी की ओर चले। अनन्तर

पाप रहित महाराज वीर युधिष्ठिर द्राविड़ देश में जाकर समुद्र के तट पर अत्यन्त पुण्य युक्त अगस्त्यय तीर्थ तथा तारी तीर्थ में पहुँचे। वहाँ पर उन्होंने धनुष धारियों में अग्रगण्य अर्जुन के उन कर्मों को सुना जिसको मनुष्य लोग नहीं कर सकते। वहाँ पाण्डु पुत्र युधिष्ठिर की महर्षियों ने पूजा की इससे वे अति प्रसन्न हुए।

इस प्रकार द्रौपदी और भाइयों के सहित पृथ्वीनाथ युधिष्ठिर ने एक सहस्र गोदान किया हे राजन! समुद्र के तट के अनेक तीर्थों को देखते हुए अत्यन्त पवित्र शूर्पारक तीर्थ में पहुँचे। वहाँ जाने से उनके कार्य्य पूर्ण हो गये। वहाँ से कुछ दूर समुद्र के तट पर चल कर इस जगत् प्रसिद्ध बन में पहुँचे जहाँ अनेक देवताओं ने तप किया था और अनेक धर्म परायण ने यज्ञ किया था। वहाँ दृढ़ लम्बे और पुष्ट हाथ वाले महाराज युधिष्ठिर ने धनुधारियों में अग्रगण्य ऋषीक पुत्र की वेदी को देखा उस पवित्र वेदी के चारों ओर अनेक ऋषि लोग बैठे थे और पुण्य करने वाले महात्मा उनकी पूजा करते थे। वहाँ से पृथ्वीनाथ महात्मा महाराज युधिष्ठिर, वसु, वायु, अश्विनीकुमार, यमराज, सूर्य्य, कुबेर, इन्द्र, विष्णु, परमेश्वर, आदित्य, शिव, चन्द्रमा, सूर्य, वरुण, साध्य गण, ब्रह्मा, पितरि, गण सहित रुद्र, सरस्वती और सिद्ध गणों के आश्रम तथा अन्य भी जो पवित्र देव उनके मनोहर स्थान थे उन सबको देखने लगे। उन सब तीर्थों में महाराज ने अनेक ब्राह्मणों से व्रत कराकर बहुत रत्न दान दिया और स्वयं भी सब तीर्थों में स्नान किया और फिर शूर्पारक तीर्थ में पहुँचे। वहाँ से समुद्र के तट होकर चलते और सब तीर्थों के दर्शन करते हुये जगत् प्रसिद्ध ब्राह्मण और मरुत गणों से कहे हुए प्रभास तीर्थ में पहुँचे। वहाँ जाकर अपने भाइयों के सहित विशाल तथा लाल नेत्र वाले महाराज युधिष्ठिर ने स्नान किया। अनन्तर महाराज ने पितर तथा देवताओं का तर्पण किया। वहाँ पर धर्मधारियों में श्रेष्ठ युधिष्ठिर ने बारह दिन निवास किया और वहाँ पर सबेरे तथा शाम को स्नान करके तथा चारों ओर अग्नि प्रदीप्त करके जल तथा वायु भक्षण किया और बारह दिन तक घोर तपस्या की। इस तीर्थ के दर्शन के पश्चात पाण्डव गण सिकताक्ष तीर्थ को चले और सैन्धवारण्य में चल के छोटी छोटी नदियों का दर्शन किया और पुष्कर तीर्थ को भी गये जहाँ जल को स्पर्श कर महादेव के मंत्र को जपने से परम सिद्धि प्राप्त होती है। यहाँ आर्चीक पर्वत है। इसमें बुद्धिमान मरुत गण निवास करते थे। यह सदैव फल तथा उदक से पूर्ण है। इसके आगे एक पत्ते वाली शमी और तालाब कैसा सुन्दर है। आगे राम का तालाब है और नारायण का आश्रम है। यह देखो महा तेजस्वी ऋचीक पुत्र ने अपने तेज से विचरते हुए रौप्या नदी के तीर में सुन्दर मार्ग बना दिया है।

हे भरत सत्तम! कुन्ती नन्दन! यह कुरुक्षेत्र का द्वार है, हम लोग यहाँ एक रात्रि निवास करेंगे। यह यमुना के तट पर प्लक्षाव तरण नामक उत्तम तीर्थ है पंडित लोग इसे स्वर्ग का द्वार बताते हैं। हे पुरुष व्याघ्र! इसी स्थान में ऋषियों में मुख्य संवर्त मुनि से रक्षित राजा मरुत्त ने उत्तम यज्ञ किया था।

लोमश ऋषि बोले हे राजन् इस स्थान पर मरने से पुरुषों को स्वर्ग प्राप्त होता है। हे प्रजानाथ! यह रम्य सरस्वती नदी है और यह पवित्र ओघवती नदी है इस सरस्वती नदी के तट पर विनशक नामक तीर्थ है। यही चमसोद्भेद तीर्थ है। जहाँ सरस्वती प्रकट हुई हैं। यह सिन्धु का महातीर्थ है और यह विष्णु पद नामक उत्तम तीर्थ दीख रहा है। यह सर्व पापों की नाशक विपाशा नामक नदी है यही भगवान वशिष्ठ मुनि अपने शरीर को पाश से बाँध कर गिर गये थे, फिर पाश से मुक्त हो गये थे इस कारण इसका नाम विपाशा पड़ा।

यह परम् पवित्र काशमीर देश है यहाँ पवित्र महर्षि लोग वास करते हैं आप उसको भाइयों के सहित देखिये। हे भारत इसी स्थान के उत्तर में सब ऋषि, नहुष पुत्र ययाति, काश्यप और अग्नि का संवाद हुआ था। हे महाराज! यह मानस का द्वार है यहीं श्रीराम ने एक वर्ष वास किया था इस सत्य-विक्रम देश का नाम वातिक खंड है इसकी सीमा विदेह देश के उत्तर तक है।

महाराष्ट्र राज्य

या

दाक्षिणात्य का प्रसिद्ध जनपद

[लेखक—चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा]

अनेक शास्त्रीय ग्रंथों में महाराष्ट्र का उल्लेख पाया जाता है। ब्रह्माण्ड पुराण में महाराष्ट्र दक्षिण देश का जनपद लिखा गया था। किसी किसी पुराण में "राष्ट्रवासिन" शब्द देखा जाता है। इसका अर्थ टीकाकारों ने सौराष्ट्र और महाराष्ट्र देश के अधिवासी किया है। हुएनत्सङ्ग के भारतागमन के समय महाराष्ट्र एक प्रसिद्ध जनपद था। हुएनत्सङ्ग कोङ्कण देश से उत्तर-पश्चिम की ओर चार सौ मील जाकर महाराष्ट्र देश में गये थे। हुएनत्सङ्ग ने लिखा है कि कोङ्कण देश से महाराष्ट्र देश में जाने का मार्ग बड़ा ही कठिन है। यह मार्ग बनैला है और हिंस्र जन्तु तथा चोरों से अत्यन्त भयानक है। उन्होंने महाराष्ट्र देश की लम्बाई चौड़ाई एक हज़ार मील बतायी है। इस राज्य की राजधानी की परिधि पाँच मील है। राजधानी के पश्चिम ओर एक बड़ी नदी बहती है। हुएनत्सङ्ग के वर्णनानुसार कनिंहम ने महाराष्ट्र देश की यह सीमा बतलायी है। उत्तर में मालव, पूर्व में आन्ध्र या कोशल, दक्षिण में कोङ्कण, पश्चिम में समुद्र। इस सीमा के अन्तर्गत का स्थान ही महाराष्ट्र राज्य है। परन्तु हुएनत्संग ने महाराष्ट्र देश की राजधानी के विषय में जो कुछ लिखा है उस विषय में कनिंहम को बड़ा सन्देह है। कनिंहम कहते हैं कि गोदावरी के तीर स्थित पैथान या प्रतिष्ठान ही सप्तम शताब्दी में महाराष्ट्र राज्य की राजधानी रहा होगा। परन्तु महाराष्ट्र देश की राजधानी से पारिपार्श्वक स्थान (भरोच) की जो दूरी हुएनत्संग ने बतलायी है वह नहीं मिलती। अतएव यह अनुमान किया जाता है कि कल्याणी नगरी ही को हुएनत्संग ने महाराष्ट्र देश की राजधानी बताया है। इसी नगरी में चालुक्य वंशी राजाओं की राजधानी थी। इस नगरी के पश्चिम की ओर कैलास नामक एक नदी भी बहती है। अब गुण्डी और भरोच की दूरी के हिसाब से भी इस नगरी को हुएनत्संग की देखी महाराष्ट्र की राजधानी मान सकते हैं। कल्याण या कल्याणी का नाम बहुत दिनों से प्रसिद्ध है। छठवीं

शताब्दी में "कालेयेना" नामक स्थान में ईसाई धर्म गुरुओं का अड्डा था। हुएनत्संग ने अपने वर्णन में लिखा है—महाराष्ट्र देश की भूमि उर्वरा है। वहाँ खेती बारी बड़ी सावधानी से होती है। यहाँ के वासी सज्जन, दृढ़ प्रतिज्ञ और बदला लेने में बड़े दक्ष हैं। उपकारियों के प्रति वे कृतज्ञ होते हैं। और शत्रुओं के प्रति वे अत्यन्त निर्दय होते हैं। अपमानित होने पर वे प्राण देकर भी बदला लेते हैं। जो कोई उनकी शरण जाकर सहायता चाहता है, उसे वे आत्म विस्मृति-पूर्वक सहायता देते हैं। महाराष्ट्र जब किसी शत्रु से बदला लेने के लिये उस पर आक्रमण करते हैं। तब वे शत्रुओं को सावधान कर दिया करते हैं। पुनः सावधान शत्रु पर वे आक्रमण करते हैं। यदि कोई महाराष्ट्र सेनापति युद्ध में हार जाता है तो वे उसको कुछ भी विशेष दण्ड नहीं देते। किन्तु पराजित सेनापति को स्त्रियों जैसे कपड़े पहिनने पड़ते हैं, और उसी लज्जा से वह प्राण त्याग कर देता है। जिस समय हुएनत्संग महाराष्ट्र में गये थे उस समय पुलकेशि नामक एक क्षत्रिय वहाँ का राजा था। वह बड़ा ही प्रसिद्ध राजा था। उसकी कीर्ति चारों ओर फैल गई थी। उसकी प्रजा राजा में बड़ी भक्ति करती थी। उसी समय कन्नौज के राजा शिलादित्य ने आस पास के समस्त स्थानों पर अपना अधिकार जमाया था। परन्तु महाराष्ट्र देश पर उनका अधिकार नहीं जम सका था। शिलादित्य ने अनेक प्रदेशों से बड़े बड़े वीरों को बुलाकर अपनी सेना में रखा था। युद्ध के समय सेना का निरीक्षण वे स्वयं करते थे, तथापि वह महाराष्ट्र देश को अपने हाथ में नहीं कर सके। राजा पुलकेशि को रण में पराजित करना तो दूर रहा, किन्तु वे स्वयं पुलकेशि से परास्त हो गये थे। महाराष्ट्र जाति की स्वाधीनता रक्षित रही थी। पीछे के समय में भी महाराष्ट्र जाति ने विलक्षण वीरता का परिचय दिया है। पुलकेशि के उत्तराधिकारियों ने हज़ार वर्ष के बाद भी मुग़ल सम्राट् औरंगज़ेब का अभिमान चूर कर दिया था।

महाराष्ट्र देश के प्राचीन इतिहास की आलोचना में ऐतिहासिकों को प्रायः बड़ी बड़ी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। महाराष्ट्र जाति के इतिहास प्रणेता ग्रेन्ट डफ़ कहते हैं—अन्य प्राचीन जातियों के समान महाराष्ट्र जाति का भी प्राचीन इतिहास अन्धकार में लीन है। मुसलमानों का महाराष्ट्र देश पर अधिकार होने से पहिले महाराष्ट्र देश में दो तीन बार राष्ट्र परिवर्तन हुआ था। पुराणों में लिखा है कि कावेरी और गोदावरी के बीच का स्थान दंडकारण्य कहा जाता है। जिस समय रावण का आधिपत्य चारों ओर फैला था उस समय रावण ने यह प्रदेश अपने गायकों को दान में दिया था। लोगों का विश्वास है कि महाराष्ट्र देश के आदिमवासी गुरशी थे, वे नीच वंश के थे। परन्तु गीतवाद्य में वे बड़े निपुण थे। ऐतिहासिक महाराष्ट्र देश में टगर नामक एक नगर का प्रथम उल्लेख करते हैं। कहते हैं, वही महाराष्ट्र देश की राजधानी थी। खीष्ट जन्म के अढ़ाई सौ वर्ष पहिले मिस्र के व्यापारी इस नगर में व्यापार करने आते थे। खीष्टीय बारहवीं सदी के ताम्रशासन से इस नगर की प्रधानता विदित होती है। इस नगर में शीलार वंशी किसी राजपूत राजा की राजधानी थी

और उसने आस पास के राज्यों पर अपना अधिकार जमा लिया था। इस समय टगर नगर का कुछ भी पता नहीं है। पुरा तत्ववेत्ता कहते हैं कि टगर वर्तमान वीर नगर के उत्तर पूर्व की ओर गोदावरी नदी के तीर पर वर्तमान था। इस नगर के प्रतिष्ठाता राजाओं ने कितने दिनों तक यहाँ राज्य किया था इसके विषय में कुछ भी विदित नहीं है। परन्तु खीष्टीय ७७-७८ ई० में शालिवाहन ने इस राज्य पर अधिकार किया था। कहते हैं शालिवाहन किसान के पुत्र थे, परन्तु लोग इन्हें महादेव का अवतार समझते हैं। शालिवाहन टगर नगर से अपनी राजधानी प्रतिष्ठान में ले गये थे। तभी से टगर नगर का नाश होना आरम्भ हुआ। प्रतिष्ठान में राजधानी स्थापित करके शालिवाहन ने बड़ी दूर तक अपना अधिकार फैला दिया। मालवा के राजा विक्रमादित्य उनसे हार गये थे, ऐसा भी सुना जाता है। कोई कोई कहते हैं कि शालिवाहन ने जब मालवा पर आक्रमण किया तब वहाँ के राजा विक्रमादित्य ने संधि कर ली। उसी सन्धि के नियमानुसार नर्मदा नदी के उत्तर का देश शालिवाहन के आधीन और नर्मदा नदी के दक्षिण का देश विक्रमादित्य के आधीन रहा। परन्तु बहुत लोग इस बात पर विश्वास नहीं करते। क्योंकि विक्रमादित्य खीष्ट जन्म के ५७ वर्ष पूर्व हुए थे। और शालिवाहन खीष्ट जन्म के ७७ वर्ष पश्चात्। इन दोनों के समय में १३४ वर्ष का अन्तर है। अतएव उनके युद्ध और सन्धि की कल्पना नितान्त असत्य है। शालिवाहन के बाद बहुत दिनों तक महाराष्ट्र देशी किसी राजा का कुछ भी परिचय नहीं पाया जाता है। खीष्टीय बारहवीं सदी के प्रारम्भ में यादव वंशियों ने देवगढ़ में नयी राजधानी की स्थापना की थी।

चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा

प्राचीन भारत का विदेशों से जलमार्ग द्वारा व्यापार

आजकल भारतवर्ष को विदेशों से व्यापार करने के लिये विदेशी जहाज़ों का मुँह ताकना पड़ता है। किन्तु एक समय वह भी था जब हमारा देश ही इन बातों में समस्त सभ्य संसार का नेता था। इसका प्रमाण न केवल संस्कृत तथा पाली के ग्रन्थों में मिलता है वरन् पाश्चात्य विद्वान भी इस बात की साक्षी देते हैं। प्रस्तुत लेख में हम उन्हीं विद्वानों का मत और संस्कृत तथा पाली-ग्रन्थों के प्रमाण पाठकों के सम्मुख रक्खेंगे। किन्तु विदेशी विद्वानों का मत स्पष्ट करने के पूर्व हम भारतीय भाषाओं के ग्रन्थों के प्रमाण बहुत संक्षेप में लिखेंगे।

'वृक्ष आयुर्वेद' या वनस्पति-शास्त्र (Botany) के अनुसार लकड़ी चार प्रकार की होती है—

लघु यत कोमलं काष्ठं ब्रह्म जाति तत्।
दृढ़ाङ्गं लघु यत काष्ठमघटं क्षत्र जाति तत्॥
कोमलं गुरु यत् काष्ठं वैश्य जाति तदुच्यते।
दृढ़ाङ्गं गुरु यत्काष्ठं शूद्र जाति तदुच्यते॥

इस प्रकार लकड़ी मुलायम तथा हलकी और कड़ी तथा भारी गुणों के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र नामों से पुकारी जाती थी।

भोज के मतानुसार क्षत्रिय जाति की लकड़ी का बना हुआ जहाज़ सुख तथा द्रव्य दाता होता है। भोज ने यह भी लिखा है कि जहाज़ के नीचे लकड़ी जोड़ने के लिये लोहा न लगाना चाहिये—

नसिन्धुगाद्यार्हति लौह बन्धं
तल्लौह कान्तेर्ह्रियते हिलौहम्।
विपद्यते तेषु जलेषु नौका
गुणेन बन्धं निजगाद भोजः॥

समुद्र के भीतर चुम्बकीय शक्ति वाले पत्थर लोहे को अपनी ओर खींचते हैं और ऐसी दशा में जहाज़ बड़े ख़तरे में आ जाता है।

आकार तथा लम्बाई चौड़ाई के अनुसार जहाज़ों के नाम ये हैं—

शूद्र, मध्यम, भीम, चपला, पटला भया, दीर्घा, पत्रपुटा, गर्भरा, मन्थरा।

सबसे बड़ा जहाज़ मन्थरा और सबसे छोटा शूद्र कहलाता था। उपर्युक्त जहाज़ सामान्य कहलाते थे और केवल नदी इत्यादि में ही चलते थे। समुद्र में चलने वाले जहाज़ 'विशेष' नाम से पुकारे जाते थे। और उनके भेद ये हैं—

दीर्घिका, तरणि, लोला, गत्वरा, गामिनी, तरि, जंघाला, प्लाविनी, धारिणी, वेगिनी।

इनमें सबसे बड़ा 'वेगिनी' जहाज़ और सब से छोटा 'दीर्घिका' होता था। 'वेगिनी' १७६ हाथ लम्बा और २२ हाथ चौड़ा होता था। ऊँचाई उसकी थी $१७\frac{३}{५}$ हाथ 'दीर्घिक' जहाज़ की लम्बाई ३२ क्यू० चौड़ाई ४ क्यू० और ऊँचाई $३\frac{१}{५}$ क्यू० होती थी।

'युक्ति कल्पतरु' में जहाज़ों को सजाने की विधि लिखी है। सर्व मन्दरा जहाज़ का कमरा सब से बड़ा होता था और उसमें शाही सामान भेजा जाता था। मध्यमन्दिरा में कमरे बीच में होते थे और उस पर राजा लोग यात्रा करते थे। अग्र मन्दिरा में कमरे अगले हिस्से में होते थे। इन जहाज़ों के बारे में लिखा है—

चिर प्रवास यात्रायां रणे काले घनात्यये।

अर्थात् वर्षा के बाद तथा लम्बी यात्रा में अथवा समुद्री लड़ाई के समय यह जहाज़ उपयोगी होते हैं। इसी प्रकार के जहाज़ द्वारा भागकर पाण्डवों ने भी प्राण रक्षा की थी।

महाकवि कालिदास ने रघुवंश में लिखा है कि बंगालियों ने इन्हीं जहाज़ों के सहारे रघु का सामना किया था।

बङ्गानुतखाय तरसा नेता नौसाधनाद्यतान।
निचखान जयस्तम्भं गङ्गा स्रोतोऽन्तरेषुच॥

भारत के प्राचीन शिला-लेखों तथा सिक्कों से कुछ प्रमाण स्पष्ट हैं। साची स्तूप के पश्चिमी फाटक न० १ में समुद्र का एक भाग पत्थर पर खुदा हुआ है। उसमें एक नाव तैरती हुई खुदी हुई है। नाव के अगले हिस्से में गिद्ध की शकल का एक पहरेदार खड़ा है और पिछले हिस्से का आकार मछली की पूँछ की तरह है। नाव में खाली सिंहासन है। एक मनुष्य उस पर छत्र लिये खड़ा है दूसरा चवर। तीसरा मनुष्य एक बड़ी पतवार से उस नाव को चला रहा है।

दूसरा प्रमाण हमें कन्हेरी की गुफाओं के पत्थरों पर की नक्काशी से मिलता है। ये गुफायें बम्बई के निकट सालसिट द्वीप में हैं। ये ईसा की दूसरी शताब्दी की गुफायें हैं। इस बात पर विद्वान एक मत हैं। इन्हीं गुफाओं में एक पत्थर पर समुद्र में एक जहाज़ के नष्ट होने का दृश्य खुदा हुआ है। इनमें दो पुरुषों की करुणा पूर्ण आँखें भगवान पद्मपाणि से अपने दुख से उद्धार अर्थात डूबने से बचने

की प्रार्थना करते दिखाई देती हैं। तिस पर भगवान पद्मपाणि ने दो दूत भेजे। यह दृश्य इसी में सम्मिलित है।

आंध्र देश के पूर्वी भाग में पाये गये प्राचीन सिक्कों के बारे में मिस्टर विन्सेंट स्मिथ का मत है कि सन् १८४ ईस्वी से २१३ ईस्वी तक जब यज्ञ श्री का राज्य था भारत का व्यापार विदेशों तक फैला था यदि ऐसा न होता तो यहाँ के सिक्कों पर जहाज़ों के चित्र कैसे होते।

यह प्रमाण तो हुए संस्कृत तथा पाली भाषाओं के ग्रन्थों से तथा शिला-लेखों और प्राचीन सिक्कों से। अब हम इतिहास को समक्ष रखते हुए विदेशी विद्वानों का मत लिखेंगे।

पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार भी भारतवर्ष जल व्यापार का केन्द्र रहा है। श्री सी० डेनियल (C. Deniell) की इन्डस्ट्रियल कम्पटीशन आफ़ ऐशिया नामक पुस्तक में एक स्थान पर लिखा है कि भारत का व्यापार रोम के साथ एक बार इतना बढ़ गया कि प्लिनी (Pliny) को बड़ा खेद हुआ कि प्रायः ७०००० पौण्ड रोम से भारतवर्ष केवल इत्र तथा गहने ज़ेवर इत्यादि में चला जाता है। इतना ही नहीं, डाक्टर सेस के भाषणों से ऋगवेद की इस बात का प्रमाण कि "व्यापारी अपने जीवन को धन के लोभ से ख़तरे में डालकर ऐसे स्थानों पर जहाज़ ले जाते थे जहाँ कोई सहारा तथा पकड़ने की वस्तु भी न थी।" एसीरिया के विशेषज्ञ डाक्टर सेस (Sayce) का कथन है कि भारत का व्यापार वेबीलोन के साथ ईसा के ३००० वर्ष पूर्व अवश्य रहा होगा क्योंकि उर प्रदेश के खण्डरों में चीड़ की लकड़ी पाई गई है। उस समय काल्डिया (Chaldea) में उर बागस (Ur Bagas) राज्य करता था। वह संयुक्त वेबीलोनिया राज्य का पहला राजा था। मिस्टर हिवेट का मत है कि यह चीड़ की लकड़ी मलाबार के किनारों से जलमार्ग द्वारा लाई गई होगी। डाक्टर सेस और मिस्टर हिवेट का मत प्रायः सभी विद्वानों को मान्य है। मिस्टर जे० केनेडी के मतानुसार इस व्यापार के ईसा के ६०० वर्ष पूर्व होने में कोई संशय नहीं क्योंकि मिस्टर रासम ने बीर नीमरद के राजा नबूकदनज़र के महल में (जो ईस्वी शताब्दी के ६ सौ वर्ष पूर्व हुआ था) एक भारतीय लकड़ी की धन्नी पाई। इसका कुछ भाग ब्रिटिश म्यूज़ियम में विद्यमान है।

अब यूनानी साहित्य के कुछ प्रमाण लीजिये। हेरोडोटस की पुस्तकों में एक स्थान पर ज़ारक्सीज़ (Zerxes) फ़ौज का वर्णन है इस फ़ौज के सिपाही सूती वर्दी पहने थे। उनके पास वेत के धनुष और वेत ही के बाण थे। बाणों के सिरे पर पैना लोहा लगा रहता था। प्रसिद्ध इतिहासकार स्मिथ साहब के अनुसार यह मानना पड़ता है कि इस फ़ौज की विजय में जो मारडोनियस (Mardonius) में हुई थी हिन्दुस्तानी धनुष धारियों का भी हाथ था। हेरोडोटस की पुस्तकों में सोना खोने वाली चींटियों का भी वर्णन मिलता है। ये चींटियाँ तिब्बत के आस पास होती थीं।

मौर्यों के समय में जो ईसा से प्राय: ४०० वर्ष पूर्व भारत में शासन करते थे सिकन्दर ने भारतवर्ष पर चढ़ाई की थी। भारत के भीतरी भाग में थल-मार्ग से आने के लिये सिन्धु नदी पार करना आवश्यक था। आईन अकबरी में पंजाब मुगल साम्राज्य का एक भाग बताया गया है और उसके अनुसार सिन्धु नदी का व्यापार ४०००० जहाज़ों द्वारा होता था। डाक्टर विन्सेन्ट (Dr. Vincent) का मत है कि इस बात में बिलकुल अतिशयोक्ति नहीं हो सकती क्योंकि ईसा से ३२५ वर्ष पूर्व सिकन्दर महान की १२४००० फ़ौज और उसकी सारी रसद इन्हीं जहाज़ों के द्वारा उतरी थी।

आर्यों का कहना है कि एक विशेष जाति जिसे क्षाथ्रोय (Xathroi) कहते हैं तीस पतवार वाली नाव बनाते थे। मेगेस्थनीज़ ने भी प्रमाण दिया है कि कुछ आदमी जहाज़ बनाने वाले ही होते थे और वह सरकारी कर्मचारी माने जाते थे।

प्लिनी (Pliny) ने अपनी एक पुस्तक में लङ्का (Taprobane) के समुद्र का वर्णन किया है। उनका कहना है कि भारत और लङ्का के बीच का समुद्र अधिकतर इतना छिछला है कि ९ या १० फीट से अधिक गहरा नहीं किन्तु कहीं कहीं इतना गहरा है कि लङ्गर नहीं डाला जा सकता। इसलिये वहाँ के लोग ऐसे जहाज़ बनाते हैं कि जब और जिस तरफ चाहें घुमा लें।

चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ चाणक्य (कौटिल्य) ने नावों तथा जहाज़ों का विशेष विभाग खोला था उसका अध्यक्ष नावध्यक्ष कहलाता था। नावों पर की चुङ्गी इत्यादि वही वसूल करता था।

इसके बाद अशोक के समय में भी यह बात प्रसिद्ध है कि उसका भाई तथा बहिन लङ्का में बौद्ध धर्म प्रचार करते थे। इन लोगों की समुद्र यात्रा का वर्णन अनेक पुस्तकों में मिलता है।

मौर्यों के बाद भारत में कुशन वंश का अधिकार हुआ। कुशन लोगों के समय में भारत पर रोम का प्रभाव इसलिये अधिक था कि अधिकतर व्यापार रोम के साथ ही होता था। राबर्ट सेवेल (Robert Seweel) ने अपनी पुस्तक रोमन क्वाइन्स फाउन्ड इन इंडिया (Roman Coins Found in India) में लिखा है कि रोम के सिक्के कोइम्बटूर ज़िले के ही आस पास इस कारण अधिक मिले कि रोम के साथ व्यापार दक्षिणी भारत की उपज से होता था। उस उपज के बदले रूमी लोग अपने सिक्के देते थे। इन सिक्कों को कुशन राजा लोग पिघलाकर भारतीय सिक्के बनाते थे।

विद्वानों ने कुछ ऐसे शब्दों का पता चलाया है जो तामिल और यूनानी में प्राय: एक ही वस्तु के लिये उपयोग किये जाते हैं। जैसे—

यूनानी	तामिल	(हिन्दी)
आरीज़ा (oryya)	आरीज़ी (arisi) =	चावल
ज़िञ्जीबर (zingiber)	इन्चीवर (inchiver) =	अदरख

व्यापारी लोगों के एक देश से दूसरे देश को सामान ले जाने के कारण इन शब्दों में एकता पाई जाती है।

एक बात और ध्यान देने योग्य है। संस्कृत श्लोकों में यूनानियों को "यवन" लिखा गया है। किन्तु जिस प्रकार भारत के आदि निवासी अपने को 'आर्य' कहते हैं उसी प्रकार, यूनानी लोग अपने को अपनी भाषा में 'यवन्स' (Iaones) कहते हैं। ईसा के ७७ वर्ष पश्चात श्रृंगार की चीज़ों का मूल्य रोम को १०००,००० पौण्ड वार्षिक देना पड़ता था। इसमें से ४०००० पौण्ड वार्षिक भारत में आता था। प्लिनी ने (Pliny) जो रोम का एक राजनीतिज्ञ था एक बार बड़े खेद से अपने भाषण में कहा था ...." No year in which India did not drain the Roman Empire of a hundred million sestorces. ......So dearly do we pay for our luxury and our women."

अर्थात्—"ऐसा कोई साल नहीं जिसमें भारतवर्ष रोम से १०००,००० पौण्ड न खींच ले जाता हो........(खेद है) कि हम लोग अपने तथा अपनी स्त्रियों के भोग-विलास के लिये इतना अधिक ख़र्च करते हैं।"

इन शब्दों से भारत वर्ष के व्यापार की महत्ता जानी जा सकती है।

भारतवर्ष की जहाज़ी कार्यवादियों में सबसे अधिक चित्ताकर्षक बात भारतीयों की जावा-यात्रा है। ये लोग कलिङ्ग देश से ईसा के ७५ वर्ष पश्चात बङ्गाल समुद्र को पार करते हुए जावा पहुँचे थे। हम यहाँ एल्फिस्टन साहब का किया हुआ वर्णन हिन्दी में उद्धृत करते हैं—

"जावा के इतिहास से साफ पता चलता है कि कुछ हिन्दू लोग कलिङ्ग देश से आये। उन्होंने यहाँ के निवासियों को सभ्य बनाया और अपने आने की तारीख से ही अपना संवत चलाया। इस संवत का पहला वर्ष ईस्वी शताब्दी के ७५ वर्ष बाद प्रारम्भ होता है। इस बात की सत्यता का प्रमाण दो बातों से मिलता है। एक तो पुराने खण्डरों में हिन्दुओं की महत्त्वपूर्ण वस्तुओं का पाया जाना दूसरे वहाँ की साधारण बोलचाल तो मलाया की है किन्तु धार्मिक, राज्य कर्मचारी तथा अधिकतर पुस्तकों की भाषा संस्कृत ढङ्ग की है। हिन्दुओं के इतने पहले आने का पता एक चीनी यात्री के लेखों से भी चलता है। वह चौथी शताब्दी में आया था और उसने समस्त जावा द्वीप में हिन्दुओं को देखा। उसका कहना है कि ये हिन्दू लोग गङ्गा से लङ्का और लङ्का से जावा और जावा से चीन जाया करते थे और उनके जहाज़ों के मल्लाह ब्राह्मण धर्म को मानते थे।*

केशव प्रसाद

---

*श्री मान राधा कुमुद मुकर्जी रचित A History of Indian shipping and maritime activity के आधार पर।

अर्बुदमाहात्म्य

पर्वतराज हिमालय का पुत्र, सारी पृथ्वी के आश्चर्यों का स्थान, स्वर्ग के समान और सब प्रकार के दुःख और पाप से रहित अर्बुदाचल नाम गिरिराज अर्थात् आबूराज विराजमान है।

जिसके शिखर पर भ्रमण करते हुए भिल्ललोक चन्द्रमण्डल को देख करके (ऊँचाई के कारण) धत्तूर पुष्प की शंका से अर्थात् चन्द्रमा के बिम्ब को धतूरे का पुष्प समझ करके उसको अपने हस्तकमल से ग्रहण करने की अभिलाषा करते हैं।

जहाँ के ऋषि मुनियों के बनाये हुए पुण्यक्षेत्र और तीर्थ की गणना करने में ब्रह्माजी और शेष भगवान् भी समर्थ नहीं हैं।

सारी पृथ्वी पर न तो ऐसा कोई वृक्ष है, न ऐसी लता है, न कोई सिद्धि है, न कोई तीर्थ है, न ऐसी नदी है, और न कोई देवता है जो उस कुबेर के स्थान अर्थात् आबू पर न विद्यमान हो।

दो हज़ार योजन लम्बा, दो हज़ार योजन चौड़ा और असंख्य योजन गहरा, बहुत अन्धकार युक्त, सब प्राणिमात्र से परित्यक्त, घास, वृक्ष और लतादि से रहित अत्यन्त भयानक और दुर्गम एक विशाल खड्ड या खाडा वहाँ पर (जहाँ पर अर्बुदाचल स्थित है) विद्यमान था।

इस खड्ड के समीप अरुन्धती के प्राणनाथ भगवान वशिष्ठ मुनि, श्रीशिवजी के चरणकमल का ध्यान करते हुये महान् तप करते थे।

दूसरे दिन श्रीवशिष्ठ मुनि हिमालय के समीप गमन करके कहने लगे कि हे गिरिराज! ऐसे गम्भीर खड्ड को पूरण करने के लिये आप एक पर्वत की प्रेरणा करें।

इस प्रकार मुनिवर वशिष्ठजी के वचन सुन करके चिरकाल सुविचार के साथ हिमालय ने अपने ज्येष्ठ पुत्र मैनाक के छोटे भ्राता, बहुत विस्तृत रूपवाले और ऐसे गम्भीर खड्ड को पूरन करने में समर्थ नंदिवर्द्धन नामक छोटे पुत्र को अर्बुद नामक सर्प की पृष्ठ पर बिठला करके उनके (वशिष्ठजी के) साथ भेज दिया।

सुविख्यात अर्बुद सर्पराज का ऐसा असामान्य सामर्थ्य देख करके श्रीवशिष्ठ जी ने सन्तुष्ट होकर उसको (अर्बुद सर्प को) यह वरदान दिया।

हे अर्बुद ! अब यह स्थान तेरे नाम से विख्यात होगा इसके शिखर के समीप जो तीर्थ होगा वह नाथतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध होगा ।

शिवजी के गण भद्रकर्ण ने नमुचि नाम दैत्य के साथ चिरकाल पर्यन्त युद्ध करके और परिणाम में उसको (नमुचि को) मार करके अपने नाम सहित पवित्र भद्रकर्ण नाम तीर्थ की रचना की ।

पूर्व जन्म का स्मरण करके ये दोनों स्त्री पुरुष (प्रजापाल राजा और उसकी राणी) फिर भी अर्बुदाचल पर आए और केदार तीर्थ में स्नान करके चिरकाल पर्यन्त वहाँ रहे ।

केदार तीर्थ यह आबू के ग्राम से अनुमान ६ कोस उत्तर दिशा में है । गुरु शिखर और उत्तराध गाँव के समीप केदारतीर्थ विराजमान है । केदारेश्वर नामक शिवलिंग केदारकुंड के निकट ही स्थापित है ।

मंकणक नामक मुनि श्रीसरस्वतीजी के तीर पर घोर तपस्या करने लगे यहाँ तक कि तपस्या करते करते उनके शरीर से शाकादि का रस बहने लगा । तब वह मुनि अपने तप से प्रसन्न होकर नृत्य करने लगे ।

इस सारस्वत तीर्थ में जो पुरुष स्नान करेंगे । वे कैलास में गमन करेंगे । तुम मेरा रूप धारण करो यह वरदान देकर शिवजी अन्तर्धान हो गये ।

नक्की तालाब के निकट ही अग्नि कोण में एक कूप सा है लोग इसको सरस्वती कुंड कहते हैं ।

सारस्वत तीर्थ के समीप ही कोटीश्वर नामक शिवलिंग विराजमान हैं, जिसके दर्शन से मनुष्यों को शिवजी का साहाय्य सुलभ हो जाता है ।

एक भीलणी कि जिसका रूप अत्यन्त निकृष्ट, मुख अति कुरूप, पेट स्तन और दन्त बड़े बड़े थे वह किसी समय में फलों के अर्थ परिभ्रमण करती हुई अर्बुदाचल के एक शिखर पर से रूपतीर्थ में गिर गई । यह इस तीर्थ में गिरने से सुन्दर स्वरूप और सुलक्षण युक्त देवाङ्गना के समान हो गई ।

इससे थोड़ी दूर पर ही राजर्षि अंबरीष का आश्रम विराजमान है कि वहाँ पर श्री ऋषिकेषजी के दर्शन करने से पापी और दुष्ट मनुष्य भी निष्पाप होकर स्वर्ग को चला जाता है ।

सिद्धेश्वर—इस शिवलिंग का यथाभिलषित पता नहीं मिला है । परन्तु यहाँ के तीर्थाश्रम परिचित मनुष्यों का प्राय: यह कथन है कि आबू के ग्राम से प्राय: ८ या ९ उत्तर की तरफ एक बड़ा ऊँचा और स्थूल शिवलिंग है । यही सिद्धेश्वर हैं ।

मणिकर्णिका तीर्थ—यह तीर्थ आबू के ग्राम से अनुमान तीन कोस अग्नि कोन में रेलवे स्कूल के पिछाड़ी स्थित है ।

यहाँ पर एक जलाशय है जिसको प्राय:सूर्यकुण्ड कहते हैं । इसके निकट ही मणिकर्णिकेश्वर नामक शिवलिंग विराजमान हैं ।

जिस स्थान में उसने (पंगु ब्राह्मण ने) तप किया था वह स्थान उसके तप के प्रभाव से अर्बुदाचल पर पंगुतीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। चैत्र शुक्ला चतुर्दशी के दिन इस पंगुतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य तत्काल कैलास में गमन करते हैं।

जिस स्थान में चित्रांगदराजा की मृत्यु हुई थी वह स्थान अब यमतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है और इसमें स्नान करनेवाले मनुष्य अनेक प्रकार के संसार के दुःखों से छूटकर, रत्नजटित विमान में बैठे हुए योगिराजों के सुलभ कैलास में गमन करते हैं।

यमतीर्थ—श्री वशिष्ठाश्रम के समीप ही यह यमतीर्थ बतलाते हैं। पृथ्वी माता की प्रार्थना से जिस स्थान में श्री बराहजी सदैव निवास करते हैं उस बराह-तीर्थ में स्नान करने से मनुष्य मात्र को मोक्ष हो जाता है।

दक्ष प्रजापति के शाप से क्षीण हुये चन्द्रमा ने अर्बुदाचल पर आकर जिस स्थान में प्रसन्नता पूर्वक तप करके नैरोग्य और पूर्णता को प्राप्त किया था उस प्रभास तीर्थ में स्नान करके श्रद्धादि क्रिया कर्म करनेवाले कोटि पितृश्वरों का उद्धार करके श्रीशिव भगवान के सायुज्य का लाभ करते हैं।

प्रभासतीर्थ—आबू नाम ग्राम से दक्षिणपार्श्व में अनुमान ५ मील पर एक कुण्ड है। इसका पानी चन्द्रकला की भाँति १५ दिवस तक बढ़ कर फिर १५ दिवस तक क्रम से घटता है। आज कल यह तीर्थ प्रायः चन्द्रभास तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध है।

अर्बुदादेवी—आबू की छावनी से पश्चिम दिशा में कुछ दूर पर अर्बुदादेवी का मन्दिर है। सामान्यतः यह देवी अधर देवी के नाम से विख्यात है। दर्शन करने वाले के लिये मार्ग बना हुआ है। थोड़ी बहुत पहाड़ की चढ़ाई है। मार्ग के मध्यभाग में एक पर्वत के निर्झर का पानी भरा है। इसके जल का श्वेत वर्ण है। लोग इसको दूधबावड़ी कहते हैं। देवी जी का मन्दिर एक बहुत बड़े पत्थर की कंदरा के नीचे है। इसका द्वार बहुत छोटा है। बैठ कर भीतर जाना पड़ता है। श्याम मूर्ति है। गुफा के अन्धकार से दीपक बिना भगवती के दर्शन होना दुर्लभ है। यहाँ पर चैत्र शुक्ला १५ और आश्विन शुक्ला ८ के दिन मेला होता है। नवरात्रि में भैंसों और बकरों का बलिदान होता है। मंदिर के समीप ही स्वच्छ जल का टाँका है। पुजारी और साधु जो यहाँ रहते हैं इस टाँके का जल काम में लाते हैं। अर्बुदा देवी का मन्दिर एक सिद्ध पीठ और दर्शनीय स्थान है।

शुक्रतीर्थ—पापमोचन (पाप काटनेवाला) महादेव और दिलवाड़ा ग्राम के बीच में यह तीर्थ स्थित है।

पिंडारकतीर्थ—यह तीर्थ आबू पर दिलवाड़ा ग्राम के समीप है। एक कुंड पर यहाँ शिव पार्वती की मूर्ति विराजमान है।

कनखलतीर्थ—यह पवित्रतीर्थ स्थान आबू पर ओरिया ग्राम के समीप बतलाते हैं।

आबूपर ओरिया ग्राम में एक शिवलिङ्ग चक्रेश्वर के नाम से विख्यात है।

कपिलातीर्थ—आबूपर श्री वशिष्ठा जी की सड़क के सहारे एक छोटा सा कुंड कुछ दूर पर है, इसमें प्राय: पानी भारा रहता है। जल पहाड़ के निर्झर का आता है। वर्षा काल में जो उछल उछल कर बहने लगता है इसको कपिल कुंड या कपिल गंगा कहते हैं। निकट ही एक मठ में शिवलिंग विराजमान है यह कपिलेश्वर के नाम से विख्यात है। इसके समीप ही श्मशान भूमि है।

अग्नितीर्थ—इस तीर्थ का यथोचित पता आबू के पहाड़ पर कहीं नहीं चला है। परन्तु पापभंजन (पान कटन) महादेव और दिलवाड़ा ग्राम के मध्य पहाड़ की कन्दरा में एक शिवलिंग विराजमान है जिसको यहाँ पर अग्नीश्वर बोलते हैं विचार किया जा सकता है कि इसके समीप ही अग्नितीर्थ है।

रक्तानुबंधतीर्थ में स्नान करने से शीघ्र ही सुवर्ण और रत्नजटित उत्तम विमान में बैठकर आनन्द पूर्वक शिवलोक में गमन करता हुआ कि जहाँ पर उसकी रानी सुनन्दा पहिले ही गमन कर चुकी थी।

वहाँ अर्बुदाचल पर ही महापुण्य करने वाले मनुष्य और देवताओं का वंद-नीय बिनायक तीर्थ विराजमान है। इसमें स्नान करने वाले मनुष्य विघ्न और शोक से रहित हो कर नाना सुख भोग करते हैं।

इस पार्थेश्वर तीर्थ में शुक्ल पक्ष के चतुर्दशी के दिन जो बाँझ स्त्री स्नान करती है तो शीघ्र ही उसके सुपुत्र का जन्म होता है और अन्त समय में वह स्त्री शिवलोक को गमन करती है।

कृष्णतीर्थ—आबू से अनादरा जाते हुए लगभग २ कोस पर एक स्थान है। यह आमपानी के नाम से विख्यात है। इससे कुछ दूर पर एक जलाशय है और उसके तट पर शिवलिंग विराजमान है। यहाँ के लोग इसको ही कृष्ण तीर्थ बतलाते हैं।

एक समय में देवराज इन्द्र के दूत ने तपस्या करते हुए मुद्गल ऋषि के पास आकर यह कहा कि आप इस विमान में विराजमान होकर स्वर्ग में गमन करें परन्तु मुद्ग मुनि ने अनित्य होने के कारण स्वर्ग गमन को स्वीकार नहीं किया। इस बात से क्रोध करके राजाइन्द्र वज्र को लेकर ऐरावत हाथी पर सवार होकर मुनि के समीप आये। परन्तु मुद्गल ऋषि ने रोषभरी दृषि से बज्र उठाकर प्रहार करते हुए इन्द्र को तत्काल स्तब्ध (चित्रलिखित सा) कर दिया। तब इन्द्र ने स्तुति कर के मुद्गल ऋषि को पसन्न किया। इस पर सन्तुष्ट होकर मुनि ने इन्द्र से कहा।

हे इन्द्र ! तुम्हारी भुजा पहिले की भाँति अपना कर्तव्य करने में प्रवृत्त हो और तुम आनन्द पूर्वक स्वर्ग में गमन करो। और यह स्थान जहाँ पर तुम्हारा और मेरा समागम हुआ है मामूहृदक के नाम से विख्यात हो।

चण्डिकाश्रम—यह स्थान आबू की छावनी से अनुमान ८ कोस उत्तर दिशा में है। गुरु शिखर से आगे है। चूंकि चंडिकाश्रम अर्बुदाचल के उत्तरीय भाग के मध्यस्थ है अतएव इसका मार्ग अनादरे ग्राम की तरफ से भी है।

जनमेजय राजा परीक्षित का पुत्र था। परीक्षित की मृत्यु सर्प काटने से हुई। इस हेतु अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने को जब राजा जनमेजय ने यज्ञ करके मंत्रकर्षण से एक एक सर्प का हवन करना प्रारम्भ किया तब कितने ही नाग भयभीत होकर अपनी प्राण रक्षा के निमित्त अर्बुदाचल पर चले आए और वहाँ पर भक्तिपूर्वक तपस्या करके श्रीदुर्गा जी को प्रसन्न किया।

सन्तुष्ट होकर श्री दुर्गा जी ने अपने शरणागत नागों से यह कहा कि तुम सब यज्ञ की समाप्ति होने तक निडर होकर मेरे समीप स्थित रहो इस कारण से वे सर्प अर्बुदाचल पर रह कर श्रीभगवती जी की सेवा करने लगे।

नागह्रदतीर्थ—यह स्थान चण्डिकाश्रम के मार्ग में जवाई ग्राम के पास स्थित है। यहाँ पर नागपंचमी के दिन मेला होता है। एक जलाशय विराजमान है जिसमें नागों की अधिकता है। नागपंचमी के दिवस, कहते हैं कि, यहाँ पर अनेक जाति के सहित एक ९ फण वाले नाग का दर्शन होता है। इस सरोवर के समीप ही वाणगंगा है।

नागहृद तीर्थ के समीप ही एक नदी की धारा है। कोई कोई इसको वाण-गंगा और कोई कोई शिव नदी कहते हैं। कितने ही पुरुषों का कथन है कि आबू परसाल ग्राम में एक जल धारा का प्रवाह है यह शिव नदी विख्यात है।

गुप्त गंगा—यहाँ के कितने ही निवासी इस पुण्य तीर्थ को आबू की बस्ती के निकट ही दक्षिण दिशा में माछ्र गाम के पहाड़ में बतलाते हैं। अन्यान्य जनों का कथन है कि अर्बुदा देवी के मन्दिर के निकट एक छोटे से पहाड़ की कंदरा में जो एक गुप्त प्राय जलाशय है वही गुप्त गंगा है।

इस कामेश्वर तीर्थ का जो स्त्री दर्शन करती है वह सौ जन्म में भी कभी विधवा नहीं होती। इस लोक में सम्पूर्ण भोग भोग करके अन्त समय शिवलोक में गमन करती है।

मार्कंडेय मुनि जिस स्थान में बहुत काल तक तपस्या करके चिरजीवी हुए उस मार्कंडेय तीर्थ में जो मनुष्य श्रावण मास के पूर्णिमा के दिन स्नान करते हैं वे इस पृथ्वी पर सारे सुख भोग करके अन्त समय में शिवलोक को गमन करते हैं।

जिस तीर्थ में स्नान करके उद्दालक मुनि ने शिवजी का सायुज्य प्राप्त किया है उस तीर्थ में स्नान करने वालों के भुक्ति मुक्ति हाथ ही में समझना चाहिये।

इसके समीप ही सिद्धेश्वर तीर्थ नामक पुण्य स्थान विराजमान है। इस सिद्धे-श्वर तीर्थ में स्नान करने वालों को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारो प्रकार में पुरुषार्थ की सिद्धि हो जाती है।

ऐरावतादि अष्टदिग्गजों ने पृथ्वी का भार धारण करने की सामर्थ्य प्राप्त

करने के हेतु जिस स्थान में तप किया था उसका नाम हस्तिहृद है। इस हस्तिहृद तीर्थ में स्नान करने वाले स्वर्ग में गमन करते हैं।

इस हस्तिहृद के समीप ही सारे देवताओं का खोदा हुआ देवखात नामक तीर्थ प्रसिद्ध है। इस देवखात तीर्थ में कन्या के सूर्य में जो मनुष्य स्नान करके श्राद्ध करते हैं वे सब इस लोक में साम्राज्य का लाभ करके अन्त समय में कोटि पीढ़ी के पित्रीश्वरों के सहित शिवलोक में गमन करते हैं।

देवखात—अर्बुदाचल के उत्तर भाग में चंडिकाश्रम के समीप देवखात नामक तीर्थ विराजमान है इसके जाने का मार्ग अनादरा ग्राम से भी है और वहाँ से यह तीर्थ चार कोस के अनुमान है।

श्री वेदव्यास के स्थापित किए हुये व्यासेश्वर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध तीर्थ के दर्शन करके मूर्ख मनुष्य भी बृहस्पति के समान बुद्धिमान होकर मोक्ष पाता है।

व्यासेश्वर तीर्थ वशिष्ठाश्रम से आगे बतलाते हैं।

श्री वशिष्ठाश्रम के समीप ही गौतमाश्रम नामक पुण्य तीर्थ विराजमान है। वहाँ पर जल से भरे हुये कुंड में जो पुरुष स्नान करते हैं वे स्वर्ग में गमन करते हैं।

एक समय यह अप्रस्तुत राजा अपनी रानी वसुमती के साथ अर्बुदाचल पर आया और वहाँ पर कुल संतारण तीर्थ में स्नान करके इसने श्राद्ध कर्म किया।

जमदग्नि ऋषि के पुत्र परशुराम जी ने एक समय अर्बुदाचल पर आकर जिस तीर्थ में स्नान करके तपस्या की थी उसका नाम राम तीर्थ प्रसिद्ध है।

रामतीर्थ—आबू की छावनी से पश्चिम में बैलीबाक नामक शहर के सहारे ही एक छोटी सी गुफा है। निर्झर-जल इसमें भर जाता है और फिर उछल उछल कर बहने लगता है। दो एक साधुओं की कुटी भी यहाँ है। श्रीराम तथा श्री शिवजी की मूर्ति भी यहाँ पर है। इस स्थान का नाम रामकुंड प्रसिद्ध है। पहिले इस कुंड में बारहों मास पानी भरा रहता था और उछल उछल कर बहता भी रहता था पर इन दिनों ग्रीष्म ऋतु में यह जलाशय शुष्क हो जाता है।

घोर कलियुग के प्रवृत्त होने पर म्लेच्छों के आक्रमण से साढ़े तीन करोड़ तीर्थ, कलिकाल के संसर्ग से मुक्त और अत्यन्त पवित्र अर्बुदाचल पर आकर स्थित हुए। अर्बुदस्थ इन तीर्थों में श्रावण कृष्णा त्रयोदशी या और पुण्य दिन या किसी दिवस में जो मनुष्य स्नान करते हैं वे कोटि पित्रीश्वरों का उद्धार करके इस लोक में बहुत काल पर्यन्त सुखपूर्वक निवास कर के अन्त में कैलास में गमन करते हैं।

वास्तव में अर्बुदाचल एक अत्यन्त सुरक्षित और दुर्गम स्थान है इसी हेतु यहाँ के तीर्थाश्रम म्लेच्छाक्रमण से निर्दूषित कहे गये हैं।

यह स्थान चन्द्रोद्भेद तीर्थ के नाम से विख्यात है। इसमें स्नान करने वाले मनुष्य का पुनर्जन्म नहीं होता है।

पुत्रप्राप्त करने के अर्थ पार्वती जी ने भी अर्बुदाचल पर आ कर बहुत तपस्या की जिस के प्रभाव से उन्होंने सारे देवताओं के पूज्य विनायक नाम पुत्र का लाभ किया।

यह स्थान गौरी शिखर के नाम से प्रसिद्ध है। माघ शुक्ला तृतीया के दिन इसमें स्नान करने वालों की मोक्ष हो जाती है।

यहाँ पर ब्रह्मा जी का लाया हुआ अत्यन्त पवित्र और सुन्दर त्रिपुष्कर नामक तीर्थ विराजमान है। इस त्रिपुष्कर तीर्थ में जो मनुष्य स्नान करते हैं वे तत्काल शिव लोक में चले जाते हैं।

त्रिपुष्कर तीर्थ—यह तीर्थ गुरु शिखर से आगे है। अर्बुदाचल पर उत्तर दिशा में जो शहर नामक ग्राम है वहा से दो कोस के अनुमान दूरी पर है। तीर्थ स्थान पहाड़ के अध बीच में विराजमान है।

धुंधुमार के रचना किये हुए सुविख्यात उमामहेश्वर तीर्थ में जो मनुष्य स्नान करते हैं उनके कोटि जन्म के पाप तत्काल ही नाश हो जाते हैं।

असुरों से पराजित होकर इन्द्र ने जिस तीर्थ में स्नान करने से फिर राज्य लक्ष्मी को प्राप्त किया उस महौजस नामक तीर्थ के दर्शन करने से मनुष्यों को शिव लोक का लाभ होता है।

लोमश मुनि ने अपने तप के प्रभाव से जम्बूद्वीप के सारे तीर्थों को एकत्रित कर दिये। इसका नाम जम्बूतीर्थ प्रसिद्ध है।

यह तीर्थ श्री वशिष्ठाश्रम के समीप ही बतलाते हैं। इसके आगे गंगाधर तीर्थ विराजमान है। बुधवार युक्त अष्टमी के दिन इस गंगाधर तीर्थ में जो मनुष्य स्नान करते हैं वह अपने पित्रीश्वरों के कोटि कुल सहित श्री शिवजी के सान्निध्य में गमन करते हैं।

कोटीश्वर—अर्बुदाचल पर गोरा ग्राम के समीप यह शिवलिंग विराजमान है। शिवपुराण की ज्ञान संहिता की ४१ वें तथा ६२ वें अध्याय में अर्बुदाचलस्थ कोटीश और अचलेश्वर संबंधी ६२ वें अध्याय में जो कथा वर्णन की गई है वह इस कथा से कुछ भिन्न है।

अर्बुदाचल पर पार्वती जी के सहित श्री सारणेश्वर जी के दर्शन करने से मनुष्यों के कोटि जन्म के पाप तत्काल दूर हो जाते हैं।

श्री सारणेश्वर जी—अर्बुदाचल पर श्री अचलेश्वर जी के बड़े मन्दिर में ही श्री सारणेश्वर जी विराजमान हैं।

वशिष्ठाश्रम के समीप ही सुप्रसिद्ध नाग तीर्थ विराजमान है। इस नाग तीर्थ में जो मनुष्य स्नान करते हैं वे सब शिव लोक में गमन करते हैं।

अर्बुदाचल पर जन्म लेने वाले कोई पशु और पक्षी समूह भी शिवलोक में गमन करते हैं। बहुत पुण्य के प्रताप से बहुत बड़भागी का ही अर्क-अर्बुदाचल पर जन्म होता है।

बदरिकाश्रम पुष्कर, गोदावरी, प्रयागराजादि को ले कर पृथ्वी के साढ़े तीन करोड़ तीर्थ कलिकाल के प्रभाव से निर्दूषित हो कर सदासर्वदा अर्बुदाचल पर विराजमान हैं।

प्राचीन भौगोलिक अनुमान

प्राचीन काल में धर्म्म का आतंक और अधिकार न केवल सामाजिक जीवन पर ही प्रत्युत भूगोल, खगोल, तर्क-शास्त्र, भौतिक आदि सब प्रकार के विज्ञानों पर भी छाया हुआ था। धर्म्म की पिटी हुई पटरी से चावल भर भी हटना महा पाप समझा जाता था। माने हुए धर्म्म, याजकों की लिखी हुई या उनके द्वारा सीधे सर्व शक्तिमान से प्राप्त पुस्तकों के प्रतिकूल कोई भी खोज या आविष्कार क्यों न हो अमान्य और अन्वेषक या आविष्कारक दण्डनीय थे। यहाँ तक कि इटली में केवल इसलिए प्राणदण्ड दिया गया कि उसने इग्बाका को 'जीसस' एक 'जे' से लिखने और 'हेलेलजुआ:' (ईश्वर की स्तुति) दो के स्थान में तीन बार गाये जाने की राय दी थी।

इस प्रकार के विशुद्ध धार्म्मिक अत्याचार के एशिया और योरोप के धार्म्मिक इतिहासों से इतने प्रमाण दिए जा सकते हैं कि उनका संग्रह एक ग्रन्थ बन जाय। लेकिन नहीं हम दर्शन और विज्ञान के ही दो एक उदाहरण देकर अपने मूल विषय की ओर ध्यान देंगे। गेलेलियो को इसलिए प्राणदण्ड की आज्ञा पोपशाही ने दी थी कि उसने धरती गोल बतलाई थी। अगर यह अपनी सच्ची बात को वापस न ले लेता तो ईसाई धर्म्म इसे सीधा स्वर्ग भेज देता और बाद में इस सुधी अन्वेषक ने अपने ज्ञान से जो लाभ मनुष्य जाति को पहुँचाया वह न पहुँचा सकता।

लेविस मगलटन (Lewis Muggleton) ने, जो सब से पिछले और सब से बड़े नबी होने के दावेदार हैं, बड़ी खोज के साथ यह पता लगाया था कि खुदा (ईश्वर या गॉड) केवल छ फीट (२ गज) लम्बा है और सूर्य्य पृथ्वी से ४ मील के अन्तर पर है।

छठी शताब्दि मसीही में एक पादरी महन्त महोदय ने, जिनका नाम 'कोसमेस' था, एक धर्म्मानुसार कट्टर भूगोल और खगोल तय्यार किया था। इनका पक्का और जबरदस्त दावा था कि इनके भूगोल और खगोल में पवित्र बाइबिल के विरुद्ध एक अक्षर भी नहीं है अतः वह विशुद्ध ईश्वरीय ज्ञान के द्वारा लिखा हुआ निर्भ्रान्त ग्रन्थ है। कोसमेस की कस्समस्स से जो भौगोलिक ज्ञान भूमिष्ट हुआ उसके अनुसार पहले अल्लाह मियाँ ने दुनिया चपटी किन्तु गोल चक्राकार (वैज्ञानिका भाषा में वृत्ताकार) बना कर तय्यार की। इस ज़मीन के चारों तरफ़

जल ही जल भरा था जिस का नाम महासागर हुआ। इस महासागर के चारों ओर फिर वृत्ताकार पृथ्वी थी और नूह के तूफान के पहले यही पुरानी दुनिया आबाद थी।

तूफान आने पर नूह महाशय अपनी नाव पर सब जीवों का बीजवत् एक एक जोड़ा बैठालकर महासागर पार कर के बीच वाली चपटी गोल ज़मीन पर आगये जिस पर हम लोग आज कल रहते हैं। यह नई दुनिया है। बाहरी धरती (पुरानी दुनिया) पर एक बहुत ऊँचा पहाड़ था, उसी के चारों ओर सूर्य्य और चाँद फिरा करते थे। सूर्य्य पहाड़ के पीछे जाता तो रात हो जाती और पहाड़ की दूसरी ओर आ जाता तो दिन होता। आपने यह भी खोजकर बतलाया था कि आकाश एक बहुत बड़ी देगची के समान ठोस वस्तु का बना हुआ और नई पुरानी दोनों दुनियाँओं पर आवर्जित (औंधाया हुआ) है। इस देगची का मुँह पुरानी दुनिया के छोरों पर ख़ूब मज़बूत कस दिया गया है।

ज़मीन के चपटी होने का एक बड़ा हेतु जो पण्डित प्रवर 'कोसमेस' ने दिया था वह यह था कि अगर धरती गोल पिण्डाकर—नारंगी की तरह—हो तो प्रलय काल में जब स्वामी मसीह पधारेंगे तो दूसरी ओर के लोग उनका शुभागमन कैसे देख सकेंगे। इस अकाट्य तर्क और युक्ति के सामने ईसाई जगत् ने सर झुका दिया और यह कानून जारी किया गया कि जो कोई व्यक्ति, नर हो या नारी, इस 'कोसमेस' के भौगोलिक और खगोलिक वृत्तान्त को झूठा समझेगा वह परम नास्तिक होने के कारण धर्म्म विद्रोह की वेदी पर बलिदान किया जायगा क्योंकि ऐसे घोर नास्तिकों के बसने से बसुन्धरा अपवित्र होती है और संसार के प्राणियों का अकल्याण होता है।

हिन्दू पौराणिक भूगोल के अनुसार दूध, दही, मधु, मक्खन आदि के समुद्रों का, सात द्वीपों और नवखण्डों का, मेरु पर्वत के साथ सूर्य के सम्बन्ध का वर्णन तो हम प्रत्याह भारत में सुना ही करते हैं। पौराणिक मतानुसार भी पृथ्वी चाक के समान गोल और चपटी है किन्तु चाक की तरह नहीं बरन् रथ के पहिए की तरह खड़ी घूमती है। सूर्य्य उदयाचल से निकलता है और अस्ताचल में डूब जाता है। सम्भवतः 'कोसमेस' जी के कान में भारत की पौराणिक कथा का ही अधूरा इलहाम हुआ होगा। अस्तु।

अब हम इसलाम धर्म्म के अनुसार भूगोल खगोल के जानने की इच्छा करते हैं, तो हमें अरबी फारसी के परम प्रतिष्ठित जानकार, इस्लामधर्म्मनिष्ठ महाकवि और पण्डित शेखसादी की ज़बानी मालूम होता है—

ज़ मशरिक़ ब मग़रिब महो आफ़्ताब।
रवां कर्द व गुस्तर्द गेती बराब॥
जमी न ज़तपोलर्जः आमद सितोह।
फ़रो कोफ़्त बर दामनश मेख कोह॥

अर्थात्—(खुदा ने) पूर्व से पश्चिम तक चाँद सूर्य्य दौड़ा दिये और पानी पर दुनिया (पृथ्वी) बिछा दी। (जब) धरती जूड़ी और कँपकँपी (हिलने झुलने)

से तंग आगई तो (अल्लाहमियाँ ने) उसके (ज़मीन के) दामन पर पहाड़ों के खूँटे ठोक दिए। (बोस्तां का उपोद्घात)

किसी जगह ऐसा भी देखा गया है कि सूर्य्य अमुक पहाड़ से निकलता है और अमुक पहाड़ के पीछे झील के कीचड़ में छिप जाता है।

अब जैन धर्म्म के भूगोल की ओर दृष्टि डालते हैं तो प्रकट होता है कि जैन धर्म्मानुसार धरती कुम्हार की चाक की तरह चपटी और गोल है, और चाक की ही तरह पड़ी भी रहती है। लेकिन पहले एक चाक की तरह धरती है फिर उसके चारों ओर वृत्ताकार जलराशि है, उसके पश्चात् फिर गोल पृथ्वी डफ के घेरे की तरह है जो जल को घेरे हुए है। इसके चारों ओर फिर पानी है और पानी के चारों ओर फिर पृथ्वी है इस प्रकार ७ वलय पानी के हैं और ६ वलय और एक मध्य चक्राकार सात भाग पृथ्वी के हैं। इन्हीं का नाम सात द्वीप और सात महासागर हैं।

अगर एक ही केन्द्र से विभिन्न अन्तर वाले अर्द्ध व्यास को लेकर हम सात वृत्त खींचें तो सात काली रेखा वाले परिधि सात द्वीप होंगे और छः बीच के स्वेत स्थान छः समुद्र होंगे, सातवाँ समुद्र सब के बाहर की अपरिमित जल-राशि होगी।

इसी के भीतर नाना प्रकार के पहाड़ आदिकों की कल्पना की गई है।

प्राचीन काल के लोगों को जितना ज्ञान था, जितनी दूर तक उनकी बुद्धि या कल्पना शक्ति दौड़ सकी उतना उन लोगों ने लिखा। इसमें हमारे हँसने या बुरा मानने की कोई बात नहीं है। बहुधा ऐसा हुआ कि जब किसी एक देश का मनुष्य दूसरे देश में गया तो उसने अपने धर्म्म शास्त्रों के अनुसार कुछ बातों का वहाँ वर्णन किया और दूसरे देश की कुछ कल्पनाओं का अनुभव किया और उसी के अनुसार अपना अनुमान लिख डाला। खेद की बात यही है कि मनुष्य अपनी कल्पना को बलात् दूसरे के गले बाँधता है, और जो मत-भेद प्रकट करता है उसे ईश्वर, धर्म्म और सचाई की दुहाई देकर सताता है।

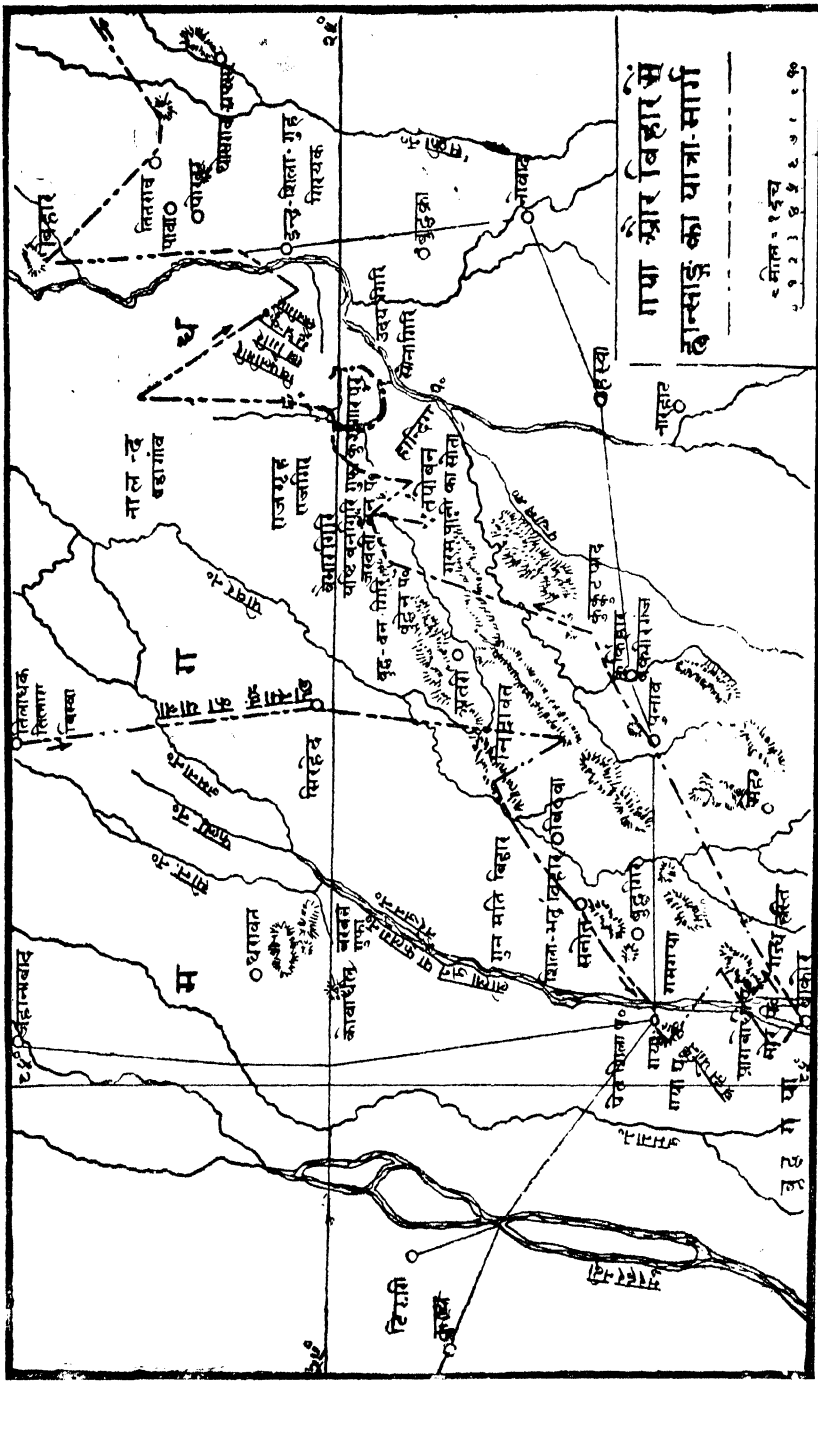
भारतवर्ष में ऐसा कभी नहीं हुआ। धर्म्म के नाम पर झगड़े हुए परन्तु किसी के विचार की स्वतंत्रता में बाधा नहीं पड़ी, जब झगड़ा हुआ है तब वाह्य धार्म्मिक आचरणों को लेकर हुआ। भारत के गणितज्ञ और ज्योतिषियों का भूगोल खगोल पौराणिकों से नहीं मिलता किन्तु ऐसी कोई बात नहीं पाई जाती जिससे अनुमान हो कि पौराणिकों और स्वतंत्र विचार वाले गणितज्ञ पण्डितों में इस मत-भेद के कारण झगड़ा हुआ हो।

हमें चाहिए कि खण्डन मण्डन से रुष्ट होने के बदले उससे सचाई की खोज में सहायता लें और सत्य के ग्रहण और असत्य के परित्याग को सदा तय्यार रहें। इतिहास, भूगोल खगोल में हमें अभी बहुत कुछ जानने की ज़रूरत है इसलिए अपने कर्म और ज्ञान इन्द्रियों के सहयोग से इन विभागों में अधिक जानकारी पैदा करने के लिए तत्पर रहें।

राधामोहन गोकुल जी

ह्वान सांग की भारतीय यात्रा

१	अगस्त सन् ६२९	घोड़े पर सवार हो कर।
२	दिसम्बर सन् ६२९	दो महीने की यात्रा के बाद वह अकिनी पहुँचा; जो कि १२०० मील दूर है।
२८	दिसम्बर सन् ६२९	बालकुआ पहुँचा जो कि ५०० मील की दूरी पर है।
१०	जनवरी सन् ६३०	इसीकुल, जो कि २५० मील पर है।
१०	फरवरी सन् ६३०	तलास, जो कि ६०० मील पर है।
५	मार्च सन् ६३०	समरकन्द, जो कि ६०० मील के करीब है।
२०	मार्च सन् ६३०	खुलम, यहाँ वह एक महीने ठहरा।
२०	अप्रैल सन् ६३०	बाल्ख।
३०	अप्रैल सन् ६३०	बोमियन, वहाँ से स्नोस्टौर्म जो कि कैपिसा के राह पर है।
१०	मई सन् ६३०	कैपिसा, यहाँ वह गर्मी भर ठहरा।
१५	अगस्त सन् ६३०	लैमग्रान, यहाँ तीन दिन ठहरा।
२०	अगस्त सन् ६३०	नगरहारा, यहाँ तीन महीने ठहर कर तीर्थ-स्थानों को देखा।
१	नवम्बर सन् ६३०	तीर्थ स्थानों को देखा।
१	दिसम्बर सन् ६३०	उटखण्डा।
१	जनवरी सन् ६३१	उद्यान, तीर्थ स्थानों का दर्शन किया।
१	मार्च सन् ६३१	
१	अप्रिल सन् ६३१	उतखण्डा लौट आया।
१०	अप्रिल सन् ६३१	तक्षिला पहुँच कर वहाँ के तीर्थ स्थानों को देखा।
२५	मई सन् ६३१	सिंहपूर।
१५	जून सन् ६३१	तक्षिला लौट आया।
१०	जुलाई सन् ६३१	उरसा।


गया और बिहार में
ह्वेन्साङ् का यात्रा-मार्ग
१ मील = १ इंच
बिहार
गया

१०	अगस्त सन् ६३१	काशमीर में दो साल ठहरा।
१	अक्तूबर सन् ६३३	काशमीर से चला।
१०	अक्तूबर सन् ६३३	पूनाक।
२०	अक्तूबर सन् ६३३	रजौरी।
१०	नवम्बर सन् ६३३	ताका।
१५	नवम्बर सन् ६३३	साकल या संगाल।
२५	नवम्बर सन् ६३३	कूसावर या कासूर, यहाँ वह १ महीने ठहरा।
१	जनवरी सन् ६३४	चीनापाती, चौदह महीने ठहरा।
१५	मार्च सन् ६३५	जलन्धर, चार महीने रुका।
१	अगस्त सन् ६३५	कूलूता।
१०	सितम्बर सन् ६३५	सतद्रु।
२५	सितम्बर सन् ६३५	परियात्र या बैरात।
५	अक्तूबर सन् ६३५	मथुरा।
२५	अक्तूबर सन् ६३५	थानेश्वर।
१	नवम्बर सन् ६३५	स्रुघ्ना, ४½ महीने ठहर कर पूरा जाड़ा और आधा बसन्त ऋतु यहीं बिताया।
१५	मार्च सन् ६३६	मदवार, यहाँ उसने आधा बसन्त और पूरा ग्रीष्म ऋतु फिर बिताया।
१	अगस्त सन् ६३६	ब्रह्मपूर।
५	अगस्त सन् ६३६	मादवार लौट आया।
१०	अगस्त सन् ६३६	गोभीसन।
१५	अगस्त सन् ६३६	अहिछत्र।
२०	अगस्त सन् ६३६	पीलोसन।
२५	अगस्त सन् ६३६	सान्कीस।
१	सितम्बर सन् ६३६	कन्नौज, तीन महीने ठहरा।
१	दिसम्बर सन् ६३६	आयुतो।
४	दिसम्बर सन् ६३६	हयमुखा।
७	दिसम्बर सन् ६३६	प्रयाग।
१०	दिसम्बर सन् ६३६	कौसाम्बी।
१३	दिसम्बर सन् ६३६	कौसपूर।
१६	दिसम्बर सन् ६३६	वैसाख या साकेत या अयोध्या।
२०	दिसम्बर सन् ६३६	स्रावस्ती।
२५	दिसम्बर सन् ६३६	कपिलवस्तु।
२८	दिसम्बर सन् ६३६	रामग्राम।
१	जनवरी सन् ६३९	कुसीनगर।

३	जनवरी सन् ६३९	खुसुन्दु, यह ब्राह्मणों का बहुत बड़ा नगर।
१२	जनवरी सन् ६३९	बनारस या वर्णासी।
२०	जनवरी सन् ६३९	गर्जपति पूर।
२५	जनवरी सन् ६३९	वैसाली।
३०	जनवरी सन् ६३९	व्रिजी।
५	फरवरी सन् ६३९	नैपाल।
१५	फरवरी सन् ६३९	वैसाली लौट आया।
२०	फरवरी सन् ६३९	मगध, जो राजधानी है और जिसे पाटली-पुत्र भी कहते हैं।
१	मार्च सन् ६३९	राजगृह और नालन्द, में बहुत दिन ठहरा सब तीर्थ स्थानों का दर्शन किया और फिर नालन्द लौट आया।
१	जनवरी सन् ६३९	हिरण्य पर्वत।
५	जनवरी सन् ६३९	चम्पा।
१०	जनवरी सन् ६३९	कानक्जोल।
१५	जनवरी सन् ६३९	पौन्द्र वर्धन।
२०	फरवरी सन् ६३९	काम रूप।
२०	मार्च सन् ६३९	समताता।
१०	अप्रैल सन् ६३९	ताम्रलिप्ति।
२०	अप्रैल सन् ६३९	किरण सुवर्ण।
५	मई सन् ६३९	औद्र या उड़ीसा।
१५	मई सन् ६३९	गन्जम।
३०	मई सन् ६३९	कलिङ्ग।
२०	जून सन् ६३९	कौसल।
२०	जुलाई सन् ६३९	आन्ध्र।
३०	जुलाई सन् ६३९	धनकाकाता में करीब ६ महीने रुका।
१	फरवरी सन् ६४०	जोरया।
२०	फरवरी सन् ६४०	द्राविड़, कंच्छीपूर या कंजीवरम जो कि राजधानी है।
१	अप्रिल सन् ६४०	मलयाकुत।
१०	मई सन् ६४०	द्राविड़ को लौट आया।
२०	जून सन् ६४०	कोंकड़पूर।
२०	जुलाई सन् ६४०	महाराष्ट्र।
१०	अगस्त सन् ६४०	भड़ोंच।
१	सितम्बर सन् ६४०	मालवा।

१०	अक्टूबर सन् ६४०	बदरी या एदर।
१	नवम्बर सन् ६४०	वल्लभी।
१६	नवम्बर सन् ६४०	आनन्दपूर।
२६	नवम्बर सन् ६४०	सूरश्त्र।
१	जनवरी सन् ६४१	गुर्जर।
२०	फरवरी सन् ६४१	उज्जैन।
२०	मार्च सन् ६४१	जझौती।
५	अप्रिल सन् ६४१	महेश्वरपूर।
१५	मई सन् ६४१	सूरश्त्र लौटा।
२०	जून सन् ६४१	उदम्बर या कच्छ।
३०	जुलाई सन् ६४१	लाङ्गल या बिलुचिस्तान।
१३	अगस्त सन् ६४१	पितसिल या पतल।
२०	अगस्त सन् ६४१	अवन्द या ब्रह्मनाबाद।
१	सितम्बर सन् ६४१	सिन्ध, अलोर जो राजधानी है यहाँ पर २० रोज़ ठहरा।
१०	अक्तूबर सन् ६४१	मुल्तान।
२०	अक्तूबर सन् ६४१	
१	अप्रिल सन् ६४२	मगध लौटा और वहाँ पर दो महीने ठहर कर सब शंकायें दूर कीं।
५	अगस्त सन् ६४२	कामरूप को फिर लौटा। वहाँ एक महीने ठहर कर दूतों को सब राज में भेजा।
१	नवम्बर सन् ६४२	कानकुब्ज या कन्नौज को जाड़े के शुरू में राजा शिलादित्य के साथ चला।
२५	दिसम्बर सन् ६४२	साल के अन्त में चला। धार्मिक सभा कन्नौज में हुई जो कि १८ दिन तक चलती रही।
१	मार्च सन् ६४३	प्रयाग। यहाँ पर एक बड़ी भारी धार्मिक सभा वसन्त ऋतु के दूसरे महीने में हुई। यह सभा ७५ दिन तक रही।
२५	मई सन् ६४३	कौसम्बी, सात दिन तक चला।
१	जुलाई सन् ६४३	पिलोसन, एक महीने चलने के बाद २ महीने ठहरा।
२०	सितम्बर सन् ६४३	जलन्धर में १ महीना ठहरा।
१५	नवम्बर सन् ६४३	सिंहपूर।
१५	दिसम्बर सन् ६४३	तक्षिला, में सात दिन ठहरा।
२५	दिसम्बर सन् ६४३	ह्वान स्वांग ने सिन्ध नदी को शीत काल में

	हाथी पर सवार होकर पार किया था । इसके बाद वह उतखण्ड पहुँचा और वहाँ पर एक महीना २० दिन ठहरा ।
१५ मार्च सन् ६४४	राजा के साथ लमघान १ महीने में पहुँचा ।
१५ जून सन् ६४४	फलन या बनू । १५ दिन तक चला ।
२० जून सन् ६४४	ओपोकिन या अफगान ।
२५ जून सन् ६४४	सोक्यूटो या गजनी ।
१ जुलाई सन् ६४४	उर्द्धस्थाना, या औतोंस्पाना या काबुल ।
५ जुलाई सन् ६४४	कपिस में ७ दिन ठहर कर धार्मिक सभा में सम्मिलित हुआ ।
२० जुलाई सन् ६४४	अन्दराब, बर्फ के पहाड़ और बर्फ से जमी हुई नदी को पार किया ।
१ अगस्त सन् ६४४	तुखार में १ महीना ठहरा ।
१ सितम्बर सन् ६४४	मुनकान ।
३ सितम्बर सन् ६४४	हिमातल ।
८ सितम्बर सन् ६४४	बदक्षान ।
१० सितम्बर सन् ६४४	कीपोक्यान ।
१२ सितम्बर सन् ६४४	क्यूलाग्नू ।
२५ सितम्बर सन् ६४४	पामर ।
२६ सितम्बर सन् ६४४	कोपान्तो में २० दिन ठहरा ।
१० अक्तूबर सन् ६४४	बड़ा पहाड़ ।
१२ अक्तूबर सन् ६४४	उश ।
१५ अक्तूबर सन् ६४४	काशगार ।
२२ अक्तूबर सन् ६४४	यारकन्द ।
२ नवम्बर सन् ६४४	कोतन में सात दिन ठहरा ।
१३ नवम्बर सन् ६४४	खीमा जो कि रेगिस्तान है ।
१६ नवम्बर सन् ६४४	निजङ्ग ।
२१ नवम्बर सन् ६४४	तुखार ।
२९ नवम्बर सन् ६४४	चेमोतन ।
१३ दिसम्बर सन् ६४४	नफोपो ।
१ जनवरी सन् ६४५	बहुत चक्कर लगाने के बाद वह चीन की सीमा पर पहुँचा ।
१ अप्रिल सन् ६४५	पश्चिम चीन की राजधानी में ६४५ के वसन्त में शीङ्गकाङ्ग के १९ वीं साल में पहुँचा ।